वर्ष - 4 अंक - 2 • अप्रैल-जून, 2019, मुंबई

यूनियन सृजन

'भारतीय संस्कृति एवं परंपरा' विशेषांक

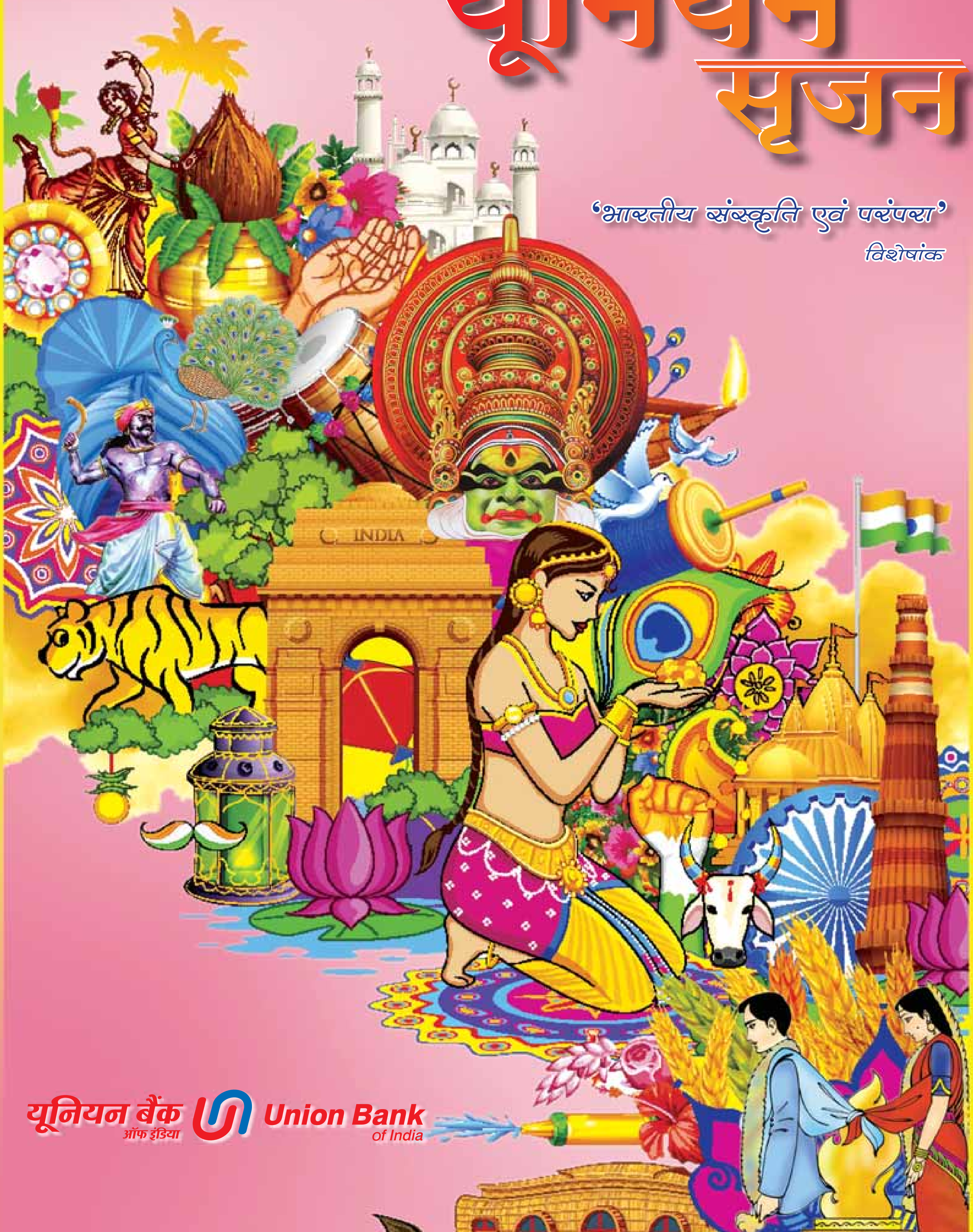

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया Union Bank of India

यूनियन सृजन

प्रकाशन तिथि : 06.08.2019

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की तिमाही हिन्दी पत्रिका

वर्ष - 4 अंक - 2 अप्रैल-जून, 2019

संरक्षक

राजकिरण रै जी.
प्रबंध निदेशक एवं सीईओ

प्रधान संपादक

ब्रजेश्वर शर्मा
महाप्रबंधक (मा.सं.)

कार्यकारी संपादक

नवल किशोर दीक्षित
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)

संपादक

डॉ. सुलभा कोरे
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)

संपादन मंडल

आर. के. कश्यप
डी. सी. चौहान
महाप्रबंधक

ब्रिगे. आशुतोष सीरौठिया, सेना मेडल
मुख्य सुरक्षा अधिकारी

राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई द्वारा आंतरिक परिचालन हेतु प्रकाशित

ई-मेल: navalkishored@unionbankofindia.com
sulabhakore @unionbankofindia.com
9820468919, 022-22896595

Printed and Published by Dr. Sulabha Shrikant Kore on behalf of Union Bank of India, Printed at Uchitha Graphic Printers Pvt. Ltd., 65, Ideal Ind. Estate, Mathuradas Mill Compound, S. B. Marg, Lower Parel, Mumbai - 400 013, and Published from Union Bank of India, 239, Union Bank Bhawan, Vidhan Bhawan Marg, Nariman Point, Mumbai - 400 021.

Editor : Dr. Sulabha Shrikant Kore

इस पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखकों के अपने हैं. प्रबंधन का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है.

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया — Union Bank of India

भारतीय संस्कृति एवं परंपरा विशेषांक

अनुक्रमणिका

- परिदृश्य 3
- संपादकीय 4
- भारतीय परंपराओं की यात्रा 5
- साहित्य सृजन - 'कैरली' अर्थात् मलयालम भाषा की मिठास 6-7
- काव्य सृजन 8-9
- भारतीय संस्कृति: इतिहास, वर्तमान एवं भविष्य 10-12
- रीति रिवाजों का महत्व 13
- भिन्नता/समानता एवं विभिन्न पहलू 14-15
- अभिमान एवं गर्व की बात 16-17
- सांस्कृतिक विविधता में एकता 18-19
- भारतीय स्थापत्य परंपरा 20-21
- मान्यताएँ एवं पालन 22-23
- भारतीय परंपराओं का विदेशों में अस्तित्व 24-25
- खान पान की विविधता 26-27
- भारतीय संस्कृति एवं परंपरा के लोक नृत्य 28-29
- संयुक्त परिवार बनाम एकल परिवार 30-31
- वायनाड अभयारण्य 32-33
- वैदिक परंपराएँ एवं वैज्ञानिकता 34-35
- रूढ़िवादी परंपरा एवं उनकी मान्यताएँ 36-37
- राजभाषा पुरस्कार 38-41
- राजभाषा समाचार 41-43
- कितनी प्रगतिशील और आधुनिकता के साथ? 44
- राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3(3) 45
- यात्रा सृजन - चंबा की शाम 46-47
- अंधविश्वास एवं परंपराएं 48-49
- क्या जटिलताओं में उलझी हुई है? 50-51
- त्योहार एवं समारोह: आयोजनों की विविधता 52-53
- पश्चिमी संस्कृति का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव 54-55
- पहनावे के विविध रंग 56-59
- भारतीय संस्कृति के मायने : पुरुष बनाम स्त्री 60-61
- आयुष्मान भव: - क्या है सदाबहार? 62
- आपकी नज़र में... 63

परिदृश्य

प्रिय यूनियनाइट्स,

हम सभी करोड़ों वर्ष पूर्व पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति के इतिहास को पढ़ते और सुनते रहे हैं. जहाँ इस ग्रह पर करोड़ों वर्षों से जीवन के चिरस्थायी बने रहने की आधारशिला सृजन है तो उसे अनवरत जारी रखने का स्तंभ उनकी "सभ्यता और परंपरा" है. जीवों के जीवन जीने की कला और कौशल ही, उनकी संस्कृति और परंपरा के नाम पर प्रचलित होती चली गयी जो जीवन के प्रति उनके समझ और संचित ज्ञान का कोष है.

हमारे देश भारत ने संस्कृति और परंपरा के संचित ज्ञान कोष से विश्व को अनेकों सांस्कृतिक, साहित्यिक और वैज्ञानिक रचनाएँ प्रदान की हैं. इन रचनाओं में आर्यभट्ट द्वारा शून्य का आविष्कार, चरक द्वारा आयुर्वेद की खोज, प्राचीनतम भाषा संस्कृत, योग, अध्यात्म, आदि अनेकों सृजन हैं. भारतीय संस्कृति की इन रचनाओं ने विश्वपट्ट में न सिर्फ अपनी अमिट छाप अंकित की है अपितु समस्त विश्व, इन रचनाओं का पथ-प्रदर्शक स्वरूप अनुकरण कर इन्हें अपने जीवन में अपना रहा है.

भारतीय संस्कृति से उत्सर्जित "वसुधैव कुटुंबकम" से हमने समस्त विश्व को जहां नजदीक लाकर एक बना दिया, वहीं "अतिथि देवो भव:" की भावना से परायों को भी अपना बना लिया.

यह हमारा गौरव है कि हम एक ऐसे देश के नागरिक हैं, जहाँ की संस्कृति एवं परंपरा इतनी प्राचीन और विकसित होने के साथ-साथ विभिन्नताओं से परिपूर्ण है. हमारी विभिन्नताओं तथा विविधताओं के कारण हम एक साथ विभिन्न संस्कृतियों और परंपराओं को अपने देश में ही देख सकते हैं. भारत के पूर्व में असम से लेकर पश्चिम में राजस्थान एवं उत्तर में कश्मीर से लेकर दक्षिण के तमिलनाडु तक सबकी अपनी संस्कृति और विशिष्ट परंपराएँ हैं. ये परंपराएँ जितनी प्राचीन हैं, उतनी ही समृद्ध भी हैं और संस्कृति तथा परंपरा के नाम पर हमारी थाती है. संस्कृति और परंपरा नामक संचित ज्ञानरूपी कोष में स्थानानुसार भिन्नता तो पायी जाती है लेकिन यह भिन्नता भी अनूठी है और एक पीढ़ी अपनी अगली पीढ़ी को प्रदान करती है.

इतनी विभिन्नताओं के बाद भी भारत 'अनेकता में एकता' के सूत्रपात से बंधा ऐसा देश है जो अपने हर राज्य और हर प्रांत के निवासियों को सदियों से एक सूत्र में पिरोता आया है. हमारे देश के स्वरूप की तरह ही हमारा यूनियन बैंक भी विभिन्न संस्कृतियों एवं परंपराओं का अनूठा संगम है. यहाँ भारत के हर कोने से कर्मचारी आए हैं और भारत के हर कोने में इसके विभिन्न प्रकार के ग्राहक फैले हुए हैं.

यूनियन सृजन के 'संस्कृति एवं परंपरा' विशेषांक द्वारा हम हमारे देश की विभिन्न संस्कृतियों एवं परंपराओं के बारे में जानने का प्रयास करेंगे. इस अंक द्वारा हम हमारे यूनियन बैंक में भी अलग-अलग प्रान्तों से आए लोगों की संस्कृतियों और परंपराओं से भी अवगत हो सकेंगे तथा उन्हें जानने, समझने में भी यह अंक हमारी सहायता करेगा. हम आशा करते हैं कि एक दूसरे की परंपरा और संस्कृति को जानकर हम एक दूसरे का सम्मान करेंगे एवं हमारे संबंधों में भी प्रगाढ़ता आएगी. एक संस्था के रूप में काम करते हुए यहां एक दूसरे को जानना और समझना बहुत मायने रखता है और मानवीय संबंधों को दृढ़तर बनाने के साथ-साथ संस्था के विकास में भी अहम भूमिका निभाता है.

आपका

राजकिरण रै जी

(राजकिरण रै जी.)

प्रबंध निदेशक एवं सीईओ

संपादकीय

राष्ट्र की संस्कृति और परंपरा, महज एक संकल्पना नहीं होती है, बल्कि यह एक अभिमान और गर्व की बात होती है, जो हम सभी में एक भारतीय होने के नाते होनी चाहिए. भारतीय संस्कृति और परंपराओं की जो विरासत हमारे हिस्से में आयी है, वह अन्य किसी भी देश को प्राप्त नहीं हुई है. इस विरासत को संभालना, जतन करना और इस पर गर्व करना, हमारा फर्ज़ है लेकिन क्या हम ऐसा करते हैं? हम अक्सर शिकायत करते रहते हैं कि हमारी भारतीय संस्कृति और परंपराओं का ह्रास हो रहा है लेकिन यह ह्रास क्यों हो रहा है, इस बारे में हम कुछ सोचते नहीं और ना ही अपने प्रयासों को लेकर अपने भीतर झाँकते हैं. हमारा इतिहास भी इस बारे में हमें कुछ ज्यादा जानकारी नहीं देता और जो जानकारी हमें इतिहास से मिलती है, वह उस समय के शासनकर्ताओं तथा उनके इतिहासकारों द्वारा तोड़ी, मरोड़ी हुई होती है. इसलिए हमें अपने इतिहास का पुनर्लेखन करने की भी आवश्यकता है.

हमारी विश्व भर में फैली विरासत हमें कहती है कि लेबनान का बाल बेक मंदिर 4300 वर्ष पूर्व भारतीयों ने बनाया था. इस मंदिर में बहुत बड़ा कमल लटकता हुआ दिखायी देता है, जोकि भारतीय संस्कृति और परंपरा का महत्वपूर्ण अंग है. कंबोडिया का अंगकोर वाट (wat) जोकि विश्व की सबसे बड़ी धार्मिक इमारत मानी जाती है, का निर्माण तमिल राजा और उसके तमिल कलाकारों द्वारा किया गया था. वैसे ये कुछ बानगियाँ भर हैं, ऐसे अनेक उदाहरण हैं लेकिन इसमें से कितनी बातों को हम भारतीय जानते हैं? हमारे पूर्वजों ने अनेक अद्वितीय और अद्भुत बातों को अंजाम दिया है लेकिन ना तो हम उन बातों को अच्छी तरह से जानते हैं और ना ही हमने उसमें कोई वैल्यू एडिशन किया है.

भारतीय संस्कृति और परंपरा अपनी एक अलग पहचान और अनूठापन लेकर पूरे विश्व में जानी जाती है. भारत ने विश्व को 'शून्य' दिया. गणित, खगोल विज्ञान, वेद, आयुर्वेद जैसी बातें दी. विवाह, परिवार जैसी संकल्पनाएँ दीं. भाषाएँ, धर्म, संगीत, नृत्य, स्थापत्य, खानपान, पहनावा, संस्कृति, परंपराएँ आदि सभी बातों में भारत में प्रांत और प्रदेश के अनुसार विविधता पायी जाती हैं लेकिन इसके बावजूद भारत जैसी एकता की मिसाल विश्व के अन्य किसी भी देश में पायी नहीं जाती. 'विविधता में एकता' यही भारत नामक इस विशाल और वैविध्यपूर्ण देश की आश्चर्यजनक पहचान है और इस पहचान को कायम रखना, हमारा फर्ज़ है.

'भारतीय संस्कृति एवं परंपरा' की इस यात्रा में जिस तरह अभिमान की बात निहित है, ठीक उसी तरह उस संस्कृति और परंपरा के प्रति हमारे कर्तव्य भी निहित हैं. इन दोनों का संतुलन रखते हुए हमें आगे बढ़ना होगा, जो सार्थक रहेगा.

यूनियन सृजन के 'भारतीय संस्कृति एवं परंपरा' विशेषांक के जरिए हमने भारत के इन्हीं कुछ रंगों को समेटने की कोशिश की है. आपको यह अंक पसंद आएगा, तभी हमारी यह कोशिश सफल होगी.

कृपया अपनी राय से हमें अवगत कराते रहिए और भारत के विभिन्न रंगों में सराबोर होते रहिए.

शुभकामनाओं के साथ,

आपकी

डॉ. सुलभा कोरे

भारतीय परंपराओं की यात्रा

परंपरा का अर्थ है कि बिना व्यवधान के श्रृंखला रूप में जारी रहना. परंपरा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में विश्वासों और रीति - रिवाजों के हस्तांतरण को संदर्भित करता है. परंपरा समाज की सामूहिक विरासत है जोकि सामाजिक संगठन के सभी स्तरों पर व्याप्त है. ऐतिहासिक दृष्टि से प्रत्येक परंपरा उद्विकास के बाद पतन की सीढ़ी तक पहुंचती है.

परंपरा आध्यात्मिक शक्तियों में निहित होती है. परंपरा का यह प्रत्यय भारतवर्ष में परंपरागत संस्कृति की विवेचना से और भी अधिक स्पष्ट होगा.

'भारत की परंपरा विभिन्नताओं से भरी पड़ी है,
पग-पग बदले बोली, पग पग बदले भेष'

वाले देश में साल भर कोई न कोई उत्सव और त्योहार मनाने की परंपरा रही है. मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर हमारे पूर्वजों ने त्योहार, पर्व, उत्सव, मेले, यात्रा इत्यादि के आयोजन की परंपरा शुरू की थी. मौर्य, चोल, मुगल काल और ब्रिटिश साम्राज्य के समय तक भारत हमेशा से ही अपनी अतिथि परंपरा के लिए मशहूर रहा है.

रिश्तों में गर्माहट और उत्सव में जोश के कारण यह देश विश्व में हमेशा अलग ही नजर आया. देश के 'अतिथि देवो भव' की परंपरा ने बड़ी संख्या में विदेशी सैलानियों को इस जीवंत संस्कृति की ओर आकर्षित किया, जिसमें अनेक धर्मो, त्योहारों, खानपान, कला, साहित्य, संगीत और कई चीजों का मेल रहा. देवताओं की इस धरती में संस्कृति, रिवाज और परंपरा से लेकर बहुत कुछ खास रहा.

भारतीय संस्कृति व परंपरा बहु आयामी है. भारतीय परंपरा सिंधु घाटी की सभ्यता के दौरान बनी व आगे चलकर वैदिक युग में विकसित हुई, उसके साथ ही पड़ोसी देशों के रिवाज, परंपराओं और विचारों का समावेश है. भारत कई धार्मिक प्रणालियों जैसे हिंदू, जैन, मुस्लिम, बुद्ध, सिख का जनक रहा, इस मिश्रण से भारत में विभिन्न परंपराओं का उदय हुआ. इन्हीं धर्मों की परंपराओं के परिणाम स्वरूप, समाज में जाति व्यवस्था, बाल विवाह, सती प्रथा, दहेज जैसी कुरीतियों का भी जन्म हुआ.

भारतीय सामाजिक व्यवस्था के मुख्य लक्षण जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार, ग्रामीण पंचायत तथा ग्रामीण जनतंत्र ये संस्थाएं हैं. जाति व्यवस्था भारतीय परंपरा में सामाजिक स्तरीकरण का आधार रहा है. जाति से परंपरागत व्यवसाय निश्चित होते हैं जिससे जाति के आधार पर सामाजिक संरचना और भी स्थाई बन जाती है.

भारत में हमारे पास विरासत का जीवन पैटर्न व पद्धतियों के अनमोल अपार भंडार हैं, उदाहरण के लिए विवाह के अवसर पर परंपरा के अनुसार विवाह संस्कार संपन्न किया जाता है प्रत्येक व्यक्ति को नए सिरे से विचार नहीं करना पड़ता कि स्त्री पुरुष में विवाह संबंध स्थापित करने के लिए क्या संस्कार किया जाना चाहिए. विभिन्न समाजों में अपनी-अपनी परंपरा के अनुसार विवाह संस्कार किए जाते हैं.

भारतीय परंपरा आर्थिक व्यवस्था यंत्रों व गृह उद्योगों पर आधारित थी जिसमें मुद्रा का बहुत कम महत्व था, अधिकतर विनिमय वस्तुओं की अदला - बदली के रूप में होता था. औद्योगीकरण के उपरांत भारतीय समाज, परंपरागत व्यवस्था के बिल्कुल विपरीत होता गया, विज्ञान व प्रौद्योगिकी की तेजी से प्रगति होती गई. औद्योगिक अर्थव्यवस्था के साथ-साथ राष्ट्रवाद, लौकिकवाद, सामाजिक गतिशीलता, व्यापक शिक्षा, अनुसंधान में प्रगति दिखाई पड़ती है.

आधुनिक काल में औद्योगिक क्रांति के कारण परंपरा से आधुनिकता की ओर विकास तेजी से बढ़ा और समकालीन सामाजिक राजनीतिक व अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के कारण आधुनिकता की ओर विकास अनिवार्य हो गया और परंपरागत रूढ़िवादी व्यवस्था कमजोर होती गई.

युग की मांग के अनुसार परंपराएं बदलती रहती हैं, आप एक नई परंपरा छोड़कर दूसरी परंपरा ग्रहण कर सकते हैं या पुरानी परंपरा के स्थान पर नई परंपरा स्थापित कर सकते हैं. आधुनिक भारतीय परंपरा संक्रमण काल से गुजर रही है, इस संक्रमण काल में प्राचीन परंपरा वादियों और आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था और मूल्यों में संघर्ष चल रहा है.

भारतीय संस्कृति व परंपरा 1400 बोलियों तथा औपचारिक रूप से मान्यता प्राप्त 22 भाषाएं, विविध धर्म, कला, वास्तु कला, साहित्य, संगीत, नृत्य की विभिन्न शैलियां भारत में विविधता में एकता के अखंडित स्वरूप वाले सबसे बड़े प्रजातंत्र का प्रतिनिधित्व करती है.

'यूनान, मिस्र, रोम सब मिट गए जहां से
मगर अब तक है बाकी निशां हमारा
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी
सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहां हमारा.'

रति मेहरोत्रा,
भोरसला शाखा, इंदौर

'कैरली' अर्थात् मलयालम् भाषा की मिठास

ब्राह्मी लिपि से व्युत्पन्न मलयालम् लिपि, जिसका उपयोग मलयालम् भाषा सहित पनिय, बेट्ट कुरुम्ब, रवुला और कभी-कभी कोंकणी लिखने में होता है.

मलयालं (मलयालम्) या कैरली (कैरलि) भारत के केरल प्रान्त में बोली जाने वाली प्रमुख भाषा है जोकि द्रविड़ भाषा-परिवार में आती है. केरल के अलावा ये तमिलनाडु के कन्याकुमारी तथा उत्तर में कर्नाटक के दक्षिण कन्नड़ जिला, लक्षद्वीप तथा अन्य कई देशों में बसे लगभग चार करोड़ मलयालियों द्वारा बोली जाती है.

मलयालम्, भाषा और लिपि के विचार से तमिल भाषा के काफी निकट है. इस पर संस्कृत का प्रभाव ईसा के पूर्व पहली सदी से हुआ है. संस्कृत शब्दों को मलयालम् शैली के अनुकूल बनाने के लिए संस्कृत से अवतरित शब्दों को संशोधित किया गया है तथा अरबों के साथ सदियों से व्यापार संबंध, अंग्रेजी तथा पुर्तगाली उपनिवेशवाद का असर भी इस भाषा पर पड़ा है.

मलयालम् का संधि-विच्छेद है - मलै (मूलशब्द : मलय - अर्थ : पर्वत) + अळम (मूलशब्द : आलयम - अर्थ : स्थान). इस भाषा के भाषिक भारत के पश्चिमी घाट के गर्भ में निवास करते हैं और इसी कारण यह नाम पड़ा है. इसका सही उच्चारण 'मलयाळम्' होता है.

केरल में बोली जाने वाली प्रधान भाषा मलयालम् है. केरल की उत्पत्ति भी मलयालम् भाषा से मानी गई है. ऐसा माना जाता है कि यह दो शब्दों मलय यानी पर्वत एवं आलय यानी भूमि से मिलकर बना है. कालांतर में इसी शब्द के आधार पर यहां बोली जाने वाली भाषा को मलयालम् कहा जाने लगा. यह भाषा हमारे संविधान में स्वीकृत प्रमुख भाषाओं में अपना स्थान रखती है.

मलयालम् भाषा अथवा उसके साहित्य की उत्पत्ति के संबंध में सही और विश्वसनीय प्रमाण प्राप्त नहीं हैं. फिर भी मलयालम् साहित्य की प्राचीनता लगभग एक हजार वर्ष तक की मानी गई है. भाषा के संबंध में हम केवल इस निष्कर्ष पर ही पहुँच सके हैं कि यह भाषा संस्कृतजन्य नहीं है - यह द्रविड़ परिवार की सदस्य भाषा है. परंतु अभी तक यह विवाद जारी है कि यह तमिल से अलग हुई उसकी शाखा है अथवा मूल द्रविड़ भाषा से विकसित अन्य दक्षिणी भाषाओं की तरह अपना अस्तित्व अलग रखने वाली भाषा है. अर्थात् समस्या यही है कि तमिल और मलयालम् का रिश्ता माँ-बेटी का है या बहन-बहन का! अनुसंधान द्वारा इस पहेली का हल ढूंढ़ने का कार्य भाषा-वैज्ञानिकों का है और वे इस गुत्थी को सुलझा सकते हैं. जो भी हो, इस बात में संदेह नहीं है कि मलयालम् का साहित्य उसी समय पल्लवित होने लगा था जब तमिल का साहित्य फल फूल चुका था. संस्कृत साहित्य की ही भाँति तमिल साहित्य को भी हम मलयालम् की प्यास बुझानेवाली स्रोतस्विनी कह सकते हैं.

सन् 3100 ईसापूर्व से लेकर 100 ईसापूर्व तक यह भाषा प्राचीन तमिल का एक स्थानीय रूप थी. ईसा पूर्व प्रथम सदी से इस पर संस्कृत का प्रभाव हुआ. तीसरी सदी से लेकर पन्द्रहवीं सदी के मध्य को मलयालम् का मध्यकाल माना जाता है. इस काल में जैनियों ने भी भाषा को प्रभावित किया. आधुनिक काल में सन् 1795 में इसमें परिवर्तन आया जब इस राज्य पर अंग्रेजी शासन पूर्णरूपेण स्थापित हो गया था.

आज भी मलयालम् को दक्षिण द्रविड़ों की भाषा कहा जाता है. यह केरल की अधिकृत राजकीय भाषा भी है. सभी केरलवासी मलयालम् को अपनी मातृभाषा मानते हैं. इस भाषा की अपनी स्वतंत्र लिपि एवं आधुनिक समृद्ध साहित्य है. मलयालम् भाषा की पांच बोलियां भी हैं, जिनके माध्यम से लोग आपस में संप्रेषण करते हैं. इस भाषा में 37 व्यंजन तथा 16 स्वर होते हैं. इसकी लिपि नौंवी शताब्दी से ही चली आ रही है. इसके बाद 13वीं शताब्दी में इसमें थोड़े परिवर्तन किए गए. इस लिपि को 'कोलेझेतु' कहा जाता है. मलयालम् कई आयामों में द्रविड़ भाषा से अलग है. सबसे बड़ा उदाहरण है इसमें स्वरों का अंत. यह इंडो-आर्य भाषा के साथ पत्राचार का माध्यम जरूर हो सकती है.

वर्तमान में मलयालम् भाषा की स्वतंत्र लिपि है, परंतु ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार यह भाषा वतेझुतु से प्रेरित थी. उस काल में चेर एवं पंड्या राज था. केरल पंद्रहवी शताब्दी की शुरुआत के तीन महीनों में पहले ही अस्तित्व में आ गया था. आज मलयालम् में ही पत्र, दस्तावेज तथा पुस्तकें आदि तैयार की जा रही हैं. यहां तक कि बच्चों को भी स्कूलों में यह भाषा पढ़ाई जाती है. हालांकि उन्हें तमिल और मलयालम् पढ़ाने के लिए वतेझुतु अक्षरों का उपयोग भी किया जाता है.

वतेझुतु से ही एक और लिपि का जन्म हुआ था और उसे कोलेझुतु कहते हैं. हालांकि दोनों ही भाषाओं के बीच में कोई आधारभूत अंतर नहीं है. बस एक अंतर जो कोलेझुतु को वतेझुतु से अलग करता है वह है इसके पास किसी भी ऐसे अक्षर का ना होना जिससे यू, ए या फिर ओ जैसे शब्द बनाए जा सकें.हालांकि यह भाषा सबसे ज्यादा कोचीन, मालाबार और त्रावणकोर में इस्तेमाल की जाती है.

वर्तमान में मलयालम् पढ़ने एवं लिखने के लिए तीन लिपियों का इस्तेमाल किया जा रहा है और इन तीनों में ही अधिक समानता है इसलिए किसी के लिए भी यह कठिन लिपि नहीं है. हालांकि इस लिपि और भाषा में क्षेत्र के अनुसार थोड़े बदलाव आसानी से देखे जा सकते हैं. राज्य के कई इलाकों में तमिल भाषा के मिलान के साथ भी मलयालम् बोली जाती है. ऐसा माना जाता है दक्षिण भारत में भाषाओं की पांडुलिपियों को सातवीं शताब्दी से ही संरक्षित करके रखने का चलन था. मणिप्रवल का साहित्य इसका सबसे बड़ा उदाहरण है.

मलयालम् भाषा लगभग तीस लाख लोगों की मातृभाषा है और भारत के दक्षिण पश्चिमी राज्य में द्रविण जनसंख्या सबसे ज्यादा है. मलयालम् को भी प्रमुख भाषा बनने में कई शताब्दियां लग ग़ई थीं और इसका विकास आज तक निरंतर जारी है. इसके साहित्य का इतिहास बहुत पुराना नहीं है. लेकिन मूल रूप से मलयालम् साहित्य में द्रविड़ झलक देखने को मिलती है. गैर द्रविड़ साहित्य में संस्कृत, अरबी, फ्रेंच, पुर्तगाली तथा अंग्रेजी का प्रभाव स्पष्ट देखने को मिलता है. इसके अलावा तमिल का प्रभाव भी देखा जा सकता है. हालांकि माना जाता है कि संस्कृत से कई और भाषाएं प्रभावित हुई थीं, इसलिए मलयालम् का प्रभावित होना कोई बड़ी बात नहीं है.

मलयालम साहित्य और साहित्यिक

हजार साल पुराने मलयालम साहित्य के प्रारंभिक काल में मुख्य रूप से तीन चरण शामिल थे, जैसे कि पच-मलयालम धारा, तमिल धारा और संस्कृत धारा.

मलयालम साहित्य में कई महान लेखकों के नाम शामिल हैं, जिनके क्षेत्र गद्य, छंद, कविता और बहुत कुछ हैं. एज़ुथचन की कृतियों में अध्यात्म रामायणम्, भरतम् और भागवतम् शामिल हैं और इन्हें मलयालम भाषा में सबसे महान क्लासिक्स माना जाता है. चंदू मेनन के सामाजिक उपन्यास और सी.वी. रमन पिल्लई के ऐतिहासिक उपन्यासों को सर्वसम्मति से मलयालम साहित्य में उत्कृष्ट क्लासिक्स माना जाता है. महान-तिकड़ी कुमारानासन, वल्लथोल नारायण मेनन और उल्लर एस. परमेस्वर अय्यर के योगदान ने कविता और गद्य में उनके लेखन द्वारा गहन रूप से मलयालम साहित्य को समृद्ध किया है.

मलयालम साहित्य के कुछ प्रसिद्ध कथाकारों में केशवदेव, ठाकाज़ी, मुहम्मद बशीर, पोंकुन्नम वर्की, एस. पोटटेकदाद, पी.सी. कुट्टीकृष्णन, दारोर, कावूर, के. सुंदरेशन, परपुरथु और एम.टी. वासुदेवन नायर शामिल हैं. तथा प्रसिद्ध उपन्यासकारों में वेनयिल कुन्नीरामन नयनार, अप्पन तम्पुरन, वी. के. कुन्नन मेनन, अंबाती नारायण पोटुवाल और सी. पी. अच्युत मेनन शामिल हैं. एम.टी. वासुदेव नायर (साहित्य अकादमी तथा ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता), अक्कितम अच्युतन नंबूथिरी (कवि तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता), एन. वी. कृष्णवारियर (कवि, भाषाविद, पत्रकार तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता), एम. लीलावती (लेखिका, आलोचक, शिक्षाविद तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता), आधुनिक मलयालम् साहित्य के पिता एरुत्तच्छन, कवियत्री और साहित्य अकादमी तथा पद्मभूषण से अलंकृत मलयालम साहित्य की दादी - नालापत बालमणि अम्मा, 'नलचरितम्' के रचनाकार उण्णायि वारियर, के.वी. वेलप्पन अय्यप्पन अर्थात् कोविलन (उपन्यासकार तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता), गोविंद शंकर कुरुप (कवि तथा साहित्य अकादमी एवं ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता), ललिताम्बिक अन्तर्जनम (साहित्यकार तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता), केरल के व्यास - के.के. तम्पुरान्, केरल के कालिदास - केरल वर्म्मा, कितने नाम गिनवाये जाएं? साहित्य और साहित्यकारों से मलयालम् भाषा समृद्ध है. इनके अलावा खादीजा मुमताज़, सी कृष्ण पिल्ला, कमला सुरय्या, कुमारन आशा, पुष्पनाथ, वयलर रामवर्मा इन्होंने भी अपनी रचनाओं से मलयालम् भाषा और साहित्य को समृद्ध किया.

संक्षेप में, केरल की प्राकृतिक सुंदरता में पनपी मलयालम भाषा और उसका साहित्य वैसा ही सुंदर, अनूठा और समाज को बदलने वाला, विकसित करने वाला है.

जॉन ए अब्राहम
नो. क्षे. का., एर्णाकुलम

यूँ ही !

न जाने क्यूँ? चलते-चलते,
देख कुछ, विचित्र, ठहर जाता हूँ, यूँ ही !

देखने लगता हूँ, वह विचित्र,
जिसे, देख करुणा के भाव, उमड़ते घुमड़ते, यूँ ही !

या करुणा दर्शाने की, इक रवायत सी,
महानता दर्शाने की, गन्दी आदत, यूँ ही !

या फिर, ख़ुद के भाव, लिखकर छपवाने की,
चर्चा में रहने की, इक लत, यूँ ही !

करना-वरना कुछ नहीं, बस कागज़ रंगते जाना,
ज़रा अफ़सोस जताना, निष्कर्ष सिफ़र, यूँ ही !

क्या होगा, दर्शन से, विचार-श्रृंखला से,
पोंगा-पंडित होने से, कुछ नहीं, बस, यूँ ही !

पर ये विचार भी तो, आत्मा से झरते,
मुक्ति के सोते हैं, निर्रथक तो नहीं, यूँ ही !

निराश न हो, मन, अंकुर पवित्र है, न,
कर्म भी महान होंगे, कभी न कभी, यूँ ही !

राहुल गुप्ता
भोपाल मुख्य शाखा, भोपाल

विकास

आज दुनियाँ में 7 प्रतिशत जीडीपी यानि
विकास शहरों में फैले कंक्रीट के जंगल यानि
विकास लंबी गाड़ियों में 2-4 घंटे ट्रैफिक में फंसना यानि
विकास zomato और swiggy में व्यस्त खाना यानि
विकास देश की आजादी के दीवानों ने कभी सोचा होगा,
ऐसा विकास?

क्या स्वराज के मस्तानों ने सोचा था ऐसा होगा विकास?
क्या बंगाल में डॉक्टरों पर हुए हमले यानि विकास?

या बिहार में 100 से ज्यादा बच्चों की मौत यानि विकास?
शहर के हर चौराहे पर भीख मांगते बच्चे यानि विकास?
या सफाई कर्मचारी के पद के लिए PhD वाले
का आवेदन यानि विकास!

सबसे अधिक प्रदूषित शहरों का भारत में होना यानि विकास!
या हमारी नदियों का पानी पीने लायक ना होना यानि विकास

अनाज के भरे गोदामों के बावजूद लोगों का भूखे रहना विकास?
आजादी के 73 साल बाद भी लोगों का बेघर होना यानि
विकास?

यदि कंक्रीट के शहरों के बजाए हमारे गावों में हरियाली
का होना होता विकास

कोका कोला के बजाए शुद्ध गंगाजल का
होना होता विकास
देश के सभी बच्चों को शिक्षा और सेहत मिलती

बुजुर्गों को चिकित्सा और मोहब्बत मिलती.
अगर हम स्वस्थ हैं और स्वच्छ हवा, पानी का आनंद लेते
तो क्या वह नहीं होता हमारा विकास?

विवेक कुमार
एमसीबी, चंडीगढ़

नट का तमाशा

पैर ज़मीन पे ही रखना ग़र आसमान में उड़ना है तुझे
जड़ों से जुड़े रहना अगर शिखर पे चढ़ना हो तुझे

गिनती के हैं वो, जो किस्मत के बुलंद होते हैं
बिन मेहनत मिलता जिन्हें, ऐसे चंद होते हैं
मायूस न हो, हर कामयाबी तेरे कदम चूमेगी
मेहनत पे धार लगा, अगर तक़दीर से लड़ना हो तुझे

भूत से सीख ले, भविष्य पे निगाह रख
हादसे होते रहते हैं, ख़ुद को आगाह रख
छोड़ जाना चंद यादें, चंद किस्से अपने पीछे
इतिहास याद रख, अगर इतिहास रचना हो तुझे

जितना तू उलझेगा ये और उलझाएगी
ज़िंदगी के ताने बाने हैं, ज़िंदगी ही सुलझाएगी
ये दुनिया है, दुनिया, इसे कौन समझ पाया है
चक्रव्यूह में प्रवेश कर, अगर चक्रव्यूह से निकालना
हो तुझे

कब कौन किसी का सहारा बना है
यकीन किसका यहाँ, भरोसा मना है
नट का तमाशा है, मदारियों का दौर है
कलाबाज़ी सीख ले, अगर गिर के संभालना हो तुझे

शफ़ीक़ ख़ान
क्षे. का., रायपुर

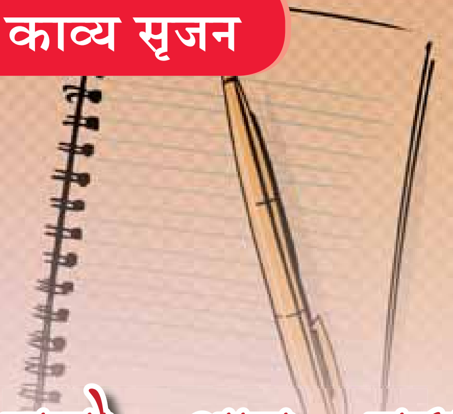

चलो आज कुछ लिख जाता हूँ...

हर रोज मन के पन्नों पर यादों की स्याही से,
कुछ न कुछ लिख जाता था.
पर यादों की स्याही कुछ फीकी सी,
मन के पन्नों पर कुछ पल ही ठहरती थी .
फिर उसी मन के पन्नों को,
उस धुंधली सी यादों को,
याद करता रह जाता था .
आज मैंने कुछ अलग सोचा है,
इस कागज़ के पन्नों पर यादों की कुछ तस्वीर बनाता हूँ.
चलो आज कुछ लिख जाता हूँ.
यादों के भंवर में
कुछ लम्हें टकराते हैं.
वो बचपन की यादें
धुंधली सी नज़र आती हैं
वो नादानी, वो ना समझी
मिटती नहीं ये धुंधली सी यादें
वो स्कूल की आखरी घण्टी का बजना
सब के चेहरों पर मुस्कान दिलाना
वो खेल के मैदानों में गिरना और संभलना
वो लड़ना-झगड़ना
वो रूठना-मनाना
वो कॉलेज का मौसम
वो दोस्तों का साथ
पेड़ की छाव में बैठना
एक दूसरे की आदतों पर हंसना और चिढ़ाना
वो प्रोफेसर के बोरिंग भाषण सुनना
वो बोरिंग क्लासों को बंक करना
बारिश की बूंदों से वो चेहरों का खिलना
आंखों ही आंखों में वो हर बात कह जाना
चलो आज कुछ लिख जाता हूँ...

ऋषि शंकर चौधरी
क्षे. का., जबलपुर

संस्कृति अपनी पहचान

देश है मेरा ऐसा अलबेला
यहाँ नहीं रहता कोई अकेला
हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई
कई धर्मों से बना ये प्रदेश मेरा
विभिन्न भाषाएँ यहाँ बोली जाती
ऐसा सर्वगुण देश है मेरा.

बड़े का सम्मान, छोटे का प्यार
इसकी संस्कृति हमें सिखाती,
प्रेम की बोली बोलो, यही हमें बताती.
अनेकता में है एकता,
यही हमारी संस्कृति की है विशेषता
महिमा इसकी इतनी न्यारी
कि लोग देखने आते हैं
हर राज्य की है अलग संस्कृति
फिर भी मानवता का पाठ पढ़ाती.

होली में रंग लगाएं, रंगों का भेद मिटाएँ
दिवाली में दिये जलाएं
मन के अंधेरे को उज्वल बनाएँ
ईद में गले लगाएँ, एक हैं हम ये बताएं
हर खुशी पर्व बन जाती
हर त्योहार हमारा इतिहास बताता.
बिहू हो, गरबा हो या भांगड़ा, घूमर हो या लावणी,
हर राज्य में लोक प्रिय है लोक नृत्य
अवसर कोई भी हो नृत्य किए बिना न पूरा होता
ईश्वर के सामने मस्तिष्क झुकाएँ बिना यहाँ कोई न सोता.
वीरों को सम्मान मिले और पूजी जाती है नारी,
कर्म हमारा ऐसा हो,
दूर करे गरीबी और लाचारी.
माँ का दर्जा देते हम अपने इस देश को
विभिन्न संस्कृति और परंपराओं के लिए
जाना जाता भारत देश हमारा.

सुषमा तिवारी
क्षे. का., जबलपुर

व्यस्त हूँ

सुबह उठती हूँ, उबाल देती हूँ,
रात के सपने,

इक चाय की प्याली में, थमा देती हूँ,
जो हैं 'अपने',

फिर काटती हूँ, अरमानों की सब्जियाँ,
'भूत' के चाकू से,

लगती हूँ फिर मजबूरियों के तेल में,
उन्हें छौंकने,

रोटियाँ भी बनाती हूँ, ख़यालों की रोज़...

जो अक्सर फूलने के बाद,
लगती हैं फटने,

निकल पड़ती हूँ फ़िर,
समय का गला पकड़ के,

खीसें निपोरते लोगों के संग,
कम्प्यूटर पर उँगलियाँ पटकने,
कभी-कभी जी करता है,
थोड़ा सिर भी पटक लूँ,

वापस आते वक्त थोड़े सपने देखती हूँ,
रास्ते में,

पहुँचते ही, फिर से उबाल देती हूँ...
वो सारे सपने...

शृंगेश्वर शर्मा
क्षे. का., चंडीगढ़

भारतीय संस्कृतिः इतिहास, वर्तमान एवं भविष्य

भारत का इतिहास अति प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है. प्राचीन काल से विश्व गुरु की भूमिका वाला भारत अपने आप में सांस्कृतिक विरासत भी समाए हुए है. जब भी संस्कृति की चर्चा होगी वह भारतीय संस्कृति के बगैर पूरी नहीं हो सकती है.

संस्कृति का अर्थ है उत्तम या सुधरी हुई स्थिति. बुद्धि के प्रयोग से अपने चारों ओर की प्राकृतिक परिस्थिति को निरन्तर सुधारता और उन्नत करता रहता है. ऐसी प्रत्येक जीवन-पद्धति, रीति-रिवाज रहन-सहन आचार-विचार, नवीन अनुसंधान और आविष्कार से मनुष्य, पशुओं और जंगलवासियों से ऊँचा उठता है तथा सभ्य बनता है. सभ्यता संस्कृति का अंग है. सभ्यता से मनुष्य के भौतिक क्षेत्र की प्रगति का पता चलता है जबकि संस्कृति से मानसिक एवं सामाजिक क्षेत्र की प्रगति की जानकारी मिलती है. मनुष्य केवल भौतिक परिस्थितियों में सुधार करके ही सन्तुष्ट नहीं हो जाता. वह भोजन से ही नहीं जीता, शरीर के साथ मन और आत्मा भी है. इन्हें सन्तुष्ट करने के लिए संस्कृति की आवश्यकता होती है. मनुष्य सौन्दर्य की खोज करते हुए संगीत, साहित्य, मूर्ति, चित्र और वास्तु आदि अनेक कलाओं को उन्नत करता है. सुखपूर्वक निवास के लिए सामाजिक और राजनीतिक संगठनों का निर्माण करता है. इस प्रकार मानसिक क्षेत्र में उन्नति की सूचक उसकी प्रत्येक सम्यक् कृति संस्कृति का अंग बनती है. इनमें प्रधान रूप से धर्म, दर्शन, सभी ज्ञान-विज्ञान और कलाओं, सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थाओं और प्रथाओं का समावेश होता है.

भारतीय संस्कृति एवं इतिहास

भारतीय संस्कृति जीवन-दर्शन, व्यक्तित्व और सामुदायिक विशेषताओं, भूगोल, ज्ञान-विज्ञान के विकास क्रम, विभिन्न समाज, जातियों के कारण बहुत ही विशिष्ट रही है. यह विभिन्न वर्ण तथा भिन्नताओं के बीच भी काफी सहज एवं स्वाभाविक रही है. भारतीय संस्कृति सत्यों पर खड़ी है और इसी कारण वह आज तक गतिशील तथा विकासोन्मुखी है. भारतीय संस्कृति का विकास अध्यात्म, धर्म तथा हिन्दू दर्शन से जुड़ा होने की वजह से इसमें दृढ़ता है.

भारतीय संस्कृति के इतिहास पर नजर दौड़ाएं तो हम पाते हैं कि यह विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है. विभिन्न पुरातात्विक खुदाइयां तथा कुछ अन्य पुरातत्त्वीय प्रमाणों से यह सिद्ध हो चुका है कि भारत भूमि आदि मानव की प्राचीनतम कर्मभूमि रही है. सिन्धु घाटी की सभ्यता के विवरणों से भी प्रमाणित होता है कि आज से लगभग पाँच हज़ार वर्ष पहले उत्तरी भारत के बहुत बड़े भाग में एक उच्च कोटि की संस्कृति का विकास हो चुका था. इसी प्रकार वेदों में परिलक्षित भारतीय संस्कृति न केवल प्राचीनता का प्रमाण है, अपितु वह भारतीय अध्यात्म और चिन्तन की भी श्रेष्ठ अभिव्यक्ति है. उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर भारतीय संस्कृति से रोम और यूनानी संस्कृति को प्राचीन तथा मिस्र, असीरिया एवं बेबीलोनिया जैसी संस्कृतियों के समकालीन माना गया है.

भारतीय संस्कृति - वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

भारतीय संस्कृति युग की मांग के अनुसार विकसित और रुपांतरित होती रही है. हमने भारतीय संस्कृति के प्राचीनतम काल से सुदृढ़ होने की बात का उल्लेख किया है. यह संस्कृति की व्यापकता तथा चरम विस्तार को भी दर्शाता है. प्राचीन मान्यताओं तथा ऐतिहासिक, पौराणिक, अध्यात्मिक मान्यताओं पर नजर डालें तो पता लगता है कि हमारी संस्कृति में कहीं न कही आज भी इसकी पैठ ज्यों की त्यों बनी हुई है. हम देखते हैं कि प्राचीन काल से प्रकृति की पूजा, जंगल एवं वृक्ष की पूजा आदि हमारे संस्कृति के अंग बन गए हैं जो आज भी उसी रुप में पूरे देश में व्याप्त है. चाहे वह वट वृक्ष, पीपल, तुलसी का पौधा हो या फिर छठ पूजा जैसे अनुष्ठान में भगवान सूर्य की पूजा की बात हो. हम यह भी देखते हैं कि बैसाखी, मकर संक्रांति, पोंगल, ओनम, सरहुल जैसे तमाम पारंपरिक पूजा पाठ आज भी हमारे समाज तथा संस्कृति की पहचान बने हुए हैं. देव पूजा, वृक्ष पूजा, प्रकृति पूजा, पशु पूजा (नदी, तालाब, झील, आकाश, गाय पूजा अथवा अन्य आदि) पक्षियों के प्रति सचेतता, पर्यावरण के

प्रति संवेदनशीलता तथा पशुओं के प्रति सोच की सहजता को दर्शाता है. यह सब हमारे संस्कृति की रीढ़ है जोकि हजारों वर्ष से मान्यताएं एवं परंपरा के आधार पर आज भी जारी हैं.

भारतीय संस्कृति एवं भविष्य:
आजकल यह चर्चा सुनने को मिलती है कि हमारे रीति-रिवाज, परंपराएं तथा संस्कृति से छेड़-छाड़ की जा रही है. हो सकता है कि जो लोग ऐसी बातें करते हैं उनके मन में कुछ आशंकाएं होंगी जिसके आधार पर भविष्य में उन्हें भारतीय संस्कृति की उतनी अच्छी स्थिति दिखायी नहीं देती होगी. बड़े बुजुर्ग इस बात को लेकर चिंतित हैं कि धर्म के रीति-रिवाज, क्रिया-कांड में नई पीढ़ी को कोई दिलचस्पी नहीं है और पाश्चात्य संस्कृति हावी होती जा रही है, समाज दिशाहीन हो रहा है, युवाओं को अतीत के प्रति कोई सम्मान नहीं है.

भारतीय दर्शन, वेद, वेदांत, सामाजिक परंपराएं आदि हमें भारतीय संस्कृति के इर्द-गिर्द ही बांधे रखते हैं.

भारत पर हजारों वर्ष तक विदेशियों का राज रहा. इस काल में भले ही धर्म की क्षति की बात की जाती है परंतु हमने यह भी देखा कि विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा अपने शासन के साथ विदेशी संस्कृति की नींव डाली गयी और कुछ हद तक चली भी लेकिन उनके जाने के बाद ही उसका विकास रुक गया तथा वे संस्कृति हमारे समाज से बाहर होने लगी.

भारत में इस्लामी संस्कृति का आगमन भी अरबों, तुर्कों और मुग़लों के माध्यम से हुआ. इसके बावजूद भारतीय संस्कृति का पृथक् अस्तित्व बना रहा और नवागत संस्कृतियों से कुछ अच्छी बातें ग्रहण करने में भारतीय संस्कृति ने संकोच नहीं किया. ठीक यही स्थिति यूरोपीय जातियों के आने तथा ब्रिटिश साम्राज्य के कारण भारत में विकसित हुई. यद्यपि ये संस्कृतियाँ अब भारतीय संस्कृतियों का अभिन्न अंग है, तथापि 'भारतीय इस्लाम' एवं 'भारतीय ईसाई' संस्कृतियों का स्वरूप विश्व के अन्य इस्लामी और ईसाई धर्मावलम्बी देशों से भिन्न देखने को मिलता है.

हम आज भी यह देखते हैं कि मुस्लिम समाज बिहार में छठ पर्व को धूम-धाम से मनाता है या कई मुस्लिम परिवार पुष्कर स्थित भगवान ब्रह्मा के मंदिर में स्वेच्छा से पूजा-अर्चना करते हैं. इसी तरह कई हिंदू परिवार भी मजारों पर जाकर पीर, फकीर को

नमन करते हैं. इसका मतलब हमारी भारतीय संस्कृति या परंपरा सुदृढ़ है.

हम देखते हैं कि भारतीय संस्कृति का मूल आधार धर्म, हिन्दू दर्शन तथा वेद हैं जिसके कारण हम कह सकते हैं कि भारतीय संस्कृति या कोई भी संस्कृति जिसका आधार वास्तविक धर्म में है, कभी नष्ट नहीं हो सकती. या उसका रंग-रूप बदल सकता है, शैली बदल सकती है, प्राचीन सूत्रों की व्याख्याएं बदल सकती हैं लेकिन धर्म की बुनियाद नहीं बदलती.

हमने भी देखा कि विदेशियों के शासन के दौरान हजारों भारतीयों को बंधक अथवा मजदूर बनाकर विभिन्न देशों में ले जाया गया. परंतु आज हम देखते हैं कि उन देशों में भी भारतीय संस्कृति, भारतीय भाषा, भारतीय परंपरा आगे बढ़ रही है. चाहे वह मॉरिसश, ट्रिनिडाड, टोबैको, सूरीनाम, फिजी, घाना, दक्षिण अफ्रिका अथवा इंग्लैंड या अन्य देश हों, हर जगह भारतीय संस्कृति अपनी जड़ें बनाकर विकसित हो रही है. हालांकि हम यह भी देखते हैं कि भारत के अंदर भी कई संस्कृतियों का प्रभाव बढ़ा है जिसके कारण भारतीय संस्कृति में भी बदलाव देखने को मिल रहा है. परंतु यह भी देखा जाता है कि इन बदलाव के बावजूद भी संस्कृति का मूल स्वरुप बरकरार रह रहा है.

भारतीय संस्कृति की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि हज़ारों वर्षों के बाद यह संस्कृति आज भी अपने मूल स्वरूप में जीवित है, जबकि मिस्र, असीरिया, यूनान और रोम की संस्कृतियाँ अपने मूल स्वरूप को लगभग विस्मृत कर चुकी हैं. भारत में प्राकृतिक देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना का क्रम शताब्दियों से चला आ रहा है. देवताओं की मान्यता, हवन और पूजा-पाठ की पद्धतियों की निरन्तरता भी आज तक अप्रभावित रही हैं. वेदों और वैदिक धर्म में करोड़ों भारतीयों की आस्था और विश्वास आज भी उतना ही है, जितना हज़ारों वर्ष पूर्व था. गीता और उपनिषदों के सन्देश हज़ारों सालों से हमारी प्रेरणा और कर्म

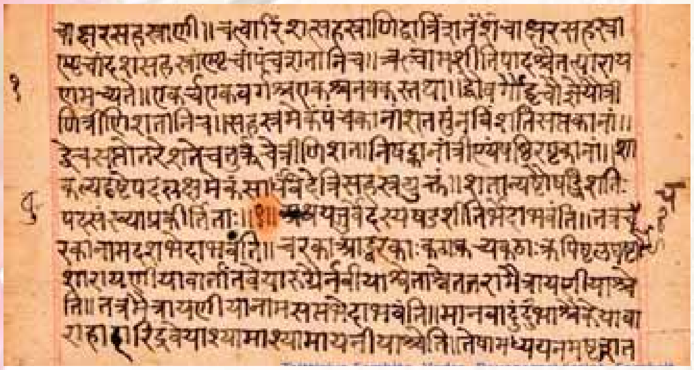

का आधार रहे हैं. किंचित परिवर्तनों के बावजूद भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्वों, जीवन मूल्यों और वचन पद्धति में एक ऐसी निरन्तरता रही है कि आज भी करोड़ों भारतीय स्वयं को उन मूल्यों एवं चिन्तन प्रणाली से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं और इससे प्रेरणा प्राप्त करते हैं.

भारतीय संस्कृति की सहिष्णु प्रकृति ने उसे दीर्घ आयु और स्थायित्व प्रदान किया है. संसार की किसी भी संस्कृति में शायद ही इतनी सहनशीलता हो, जितनी भारतीय संस्कृति में पाई जाती है. भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता एवं उदारता के कारण उसमें एक ग्रहणशीलता प्रवृत्ति को विकसित होने का अवसर मिला. वस्तुत: जिस संस्कृति में लोकतन्त्र एवं स्थायित्व के आधार व्यापक हों, उस संस्कृति में ग्रहणशीलता की प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से ही उत्पन्न हो जाती है. हमारी संस्कृति में यहाँ के मूल निवासियों ने समन्वय की प्रक्रिया के साथ ही बाहर से आने वाले शक, हूण, यूनानी एवं कुषाण जैसी प्रजातियों के लोग भी घुल-मिल कर अपनी पहचान खो बैठे.

भारतीय संस्कृति में आश्रम-व्यवस्था के साथ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे चार पुरुषार्थों का विशिष्ट स्थान रहा है. वस्तुत: इन पुरुषार्थों ने ही भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिकता के साथ भौतिकता का एक अदभुत समन्वय कर दिया है. हमारी संस्कृति में जीवन के दैहिक और पारलौकिक दोनों पहलुओं से धर्म को सम्बद्ध किया गया था.

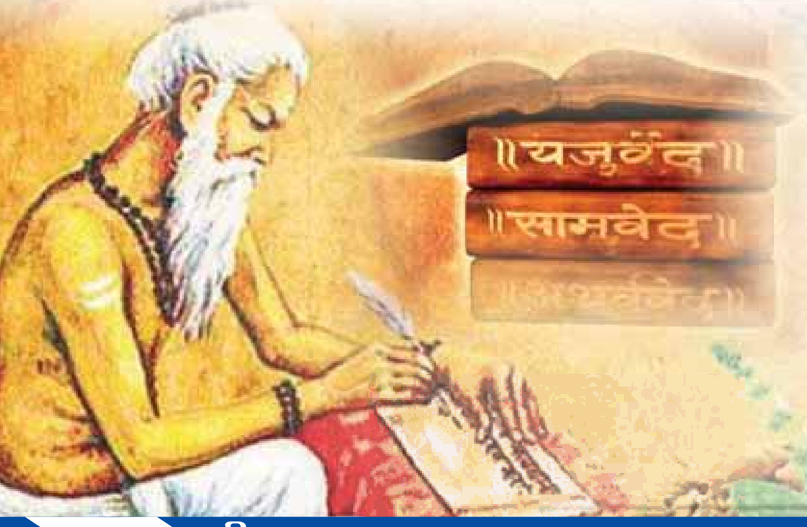

भौगोलिक दृष्टि से भारत विविधताओं का देश है, फिर भी सांस्कृतिक रूप से एक इकाई के रूप में इसका अस्तित्व प्राचीनकाल से बना हुआ है. इस विशाल देश में उत्तर का पर्वतीय भू-भाग, जिसकी सीमा पूर्व में ब्रह्मपुत्र और पश्चिम में सिन्धु नदियों तक विस्तृत है. इसके साथ ही गंगा, यमुना, सतलज की उपजाऊ कृषि भूमि, विन्ध्य और दक्षिण का वनों से आच्छादित पठारी भू-भाग, पश्चिम में थार का रेगिस्तान, दक्षिण का तटीय प्रदेश तथा पूर्व में असम और मेघालय का अतिवृष्टि का सुरम्य क्षेत्र सम्मिलित है. इस भौगोलिक विभिन्नता के अतिरिक्त इस देश में आर्थिक और सामाजिक भिन्नता भी पर्याप्त रूप से विद्यमान है. वस्तुत: इन भिन्नताओं के कारण ही भारत में अनेक सांस्कृतिक उपधाराएँ विकसित होकर पल्लवित और पुष्पित हुई हैं जो आज भी विद्यमान हैं तथा भविष्य में भी जारी रहेंगी.

हिमालय सम्पूर्ण देश के गौरव का प्रतीक रहा है, तो गंगा - यमुना और नर्मदा जैसी नदियों की स्तुति यहाँ के लोग प्राचीनकाल से करते आ रहे हैं. राम, कृष्ण और शिव की आराधना यहाँ सदियों से की जाती रही है. भारत की सभी भाषाओं में इन देवताओं पर आधारित साहित्य का सृजन हुआ है. उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक सम्पूर्ण भारत में जन्म, विवाह और मृत्यु के संस्कार एक समान प्रचलित हैं. विभिन्न रीति-रिवाज, आचार-व्यवहार और तीज-त्योहारों में भी विविधता में समानता है. भाषाओं की विविधता अवश्य है फिर भी संगीत, नृत्य और नाट्य के मौलिक स्वरूपों में आश्चर्यजनक समानता है. संगीत के सात स्वर और नृत्य के त्रिताल सम्पूर्ण भारत में समान रूप से प्रचलित हैं. भारत अनेक धर्मों, सम्प्रदायों, मतों और पृथक् आस्थाओं एवं विश्वासों का महादेश है, तथापि इसका सांस्कृतिक समुच्चय और अनेकता में एकता का स्वरूप संसार के अन्य देशों के लिए विस्मय का विषय रहा है.

अत: हमारा ऐसा मानना है कि भारतीय संस्कृति प्राचीन काल से सुदृढ़ रही है वर्तमान में भी अपनी स्थिति को मजबूती से आगे बढ़ा रही है एवं भविष्य में भी अपनी सुदृढ़ता को बरकरार रखते हुए अक्षुण्ण रहेगी. भारतीय संस्कृति केवल संस्कृति ही नहीं बल्कि एक एहसास बन गयी है जो भारतीयों के दिलों दिमाग में व्याप्त है.

डॉ. विजय कुमार पाण्डेय
क्षे.का., पटना

रीति रिवाजों का महत्व

किसी भी देश के विकास में उसकी संस्कृति का बहुत योगदान होता है. देश की संस्कृति उसके मूल्य, प्रथाएं, परंपराएं एवं रीति-रिवाजों का प्रतिनिधित्व करती हैं. भारतीय संस्कृति कभी कठोर नहीं रही इसलिए यह आधुनिक काल में भी गर्व के साथ जिंदा है. भारतीय संस्कृति की खास बात यह है कि यह दूसरी संस्कृतियों की विशेषताएं सही समय पर अपना लेती हैं और इस तरह एक समकालीन और स्वीकार्य परंपरा के तौर पर बाहर आ जाती है. समय के साथ चलते रहना भारतीय संस्कृति की सबसे अनूठी बात है. ये रीति-रिवाज और परंपराएं ही प्रत्येक जाति धर्म की पृथक पहचान बनाये हुए हैं.

भारतीय संस्कृति में रीति-रिवाजों और परंपराओं का वैज्ञानिक महत्व है. जैसे हमारे बुजुर्ग प्रात: उठकर अपने दोनों हाथों की हथेलियों को देखते हैं और उनमें ईश्वर का दर्शन करते हैं. धरती पर पैर रखने से पहले धरती माँ को प्रणाम करते हैं क्योंकि जो धरती माँ धन्य-धान्य से परिपूर्ण करती है, हमारा पालन-पोषण करती है, उसी पर हम पैर रखते हैं. इसलिए धरती पर पैर रखने से पहले उसे प्रणाम कर उससे माफ़ी मांगते हैं. यहां हर धर्म का अपना अलग रीति-रिवाज है. उदाहरण के तौर पर हिन्दू परिवार में अपने से बड़ों को नमस्ते कह कर अभिवादन किया जाता है. उसी तरह मुस्लिम आदाब कहकर अभिवादन करते हैं. सूर्य ग्रहण के समय घर से बाहर न निकलने की परंपरा के पीछे वैज्ञानिक तथ्य छिपा हुआ है. दरअसल सूर्यग्रहण के समय सूर्य से बहुत ही हानिकारक किरणें निकलती हैं जो हमें नुकसान पहुंचाती हैं. इसलिए कहा जाता है कि हमें सूर्योदय से पहले उठना चाहिए क्योंकि इस समय सूरज की किरणों में भरपूर विटामिन 'डी' होती है और ब्रह्म मुहूर्त में उठने से हम दिनोंदिन तरोताजा रहते हैं और आलस हमारे पास भी नहीं भटकता.

रीति-रिवाजों का महत्व : हिन्दू धर्म में प्राकृतिक जीवन तथा समाज में प्राणी मात्र के कल्याण पर विशेष बल दिया जाता है. किन्तु इस भावात्मिक शब्दों को क्रियात्मिक रूप देना हर किसी की योग्यता के बस की बात नहीं. जब तक कोई गतिविधि दिखाई ना पड़े, कोई भी भावनात्मक तथा दार्शनिक काम जन साधारण की कल्पना से बाहर रहता है. भावनाओं को साकार करने का कार्य रीति-रिवाज करते हैं. रीति-रिवाजों का अस्तित्व भोजन में मसालों की तरह का है, जिसके बिना जीवन नीरस और फीका हो जाएगा. हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार जब बच्चा जन्म लेने के बाद ब्राह्मण को पूछकर बच्चे का नामकरण किया जाता है. फिर सूर्य पूजा के दिन बच्चे की माँ नहा धोकर तैयार होती है और नये कपड़े पहनती है. माँ बच्चे को गोद में लेकर सूर्य की तरफ मुंह करके बैठती है. मीठा खाना बनाया जाता है जिससे सूर्य पूजन करते हैं.

भारतीय रीति-रिवाजों में उपवास रखना तो सदियों से चला आ रहा है. उपवास को हिन्दू धर्म में बहुत महत्व दिया गया है. नवरात्रि के व्रत, सोलह सोमवार का व्रत, जन्माष्टमी का व्रत, करवा चौथ आदि जैसे कितने ही मौकों पर हिन्दू धर्म में उपवास रखा जाता है. ठीक इसी प्रकार मुस्लिम धर्म में रमजान के महीने में रोजा (उपवास) रखा जाता है. ईसाई धर्म में भी ईस्टर के पर्व में उपवास रखा जाता है. यह माना जाता है कि उपवास रखने से हमारी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं.

सूर्य नमस्कार की परंपरा हिन्दू धर्म में प्राचीन काल से चली आ रही है. इस प्रथा में रोज सुबह जल्दी उठकर नहा-धोकर सूर्य देव को जल दिया जाता है और फिर हाथ जोड़कर उन्हें नमस्कार किया जाता है. सूर्य नमस्कार करते वक्त जब हम जल चढ़ाते हैं तो सूर्य की किरणें पानी से होकर सीधे हमारी आँखों पर पड़ती हैं जो हमारी आँखों के लिए अत्यंत लाभकारी माना जाता है. इस परंपरा से हमारे शरीर को कितना लाभ होता है यह तो इस बात से जाहिर हो जाता है कि अब इस कार्य को एक अहम योगासन माना जाता है.

भारतीय परंपरा एवं रीति-रिवाजों के अनुसार हिन्दू धर्म में हर विवाहित स्त्री माथे पर सिंदूर लगाती है. यह सिर्फ सुहाग की निशानी ही नहीं बल्कि पति की लंबी उम्र से भी जुड़ा होता है. इसी तरह चूड़ी पहनने की परंपरा भी भारतीय महिलाओं के लिए अहम होती है. उनकी चूड़ियों का चमकदार रंग और उनकी खनखनाहट महिलाओं का सौंदर्य निखार देती है. शादी में दुल्हन के हाथ में जब तक लाल चूड़ियाँ न हों तब तक वह पूरी तरह तैयार नहीं लगती.

विश्व में कहीं भी कोई मानव ऐसा नहीं है जहाँ लोगों ने सारे रीति-रिवाज छोड़कर केवल भावनात्मक क्रियाओं के सहारे जीवन व्यतीत किया हो. जैसे पूजा पाठ करना आदि रीति-रिवाज हैं उसी प्रकार झण्डा फहराना, शपथ लेना या विश्वविद्यालय में गाउन पहन कर प्रमाण पत्र ग्रहण करना भी रीति-रिवाज है. परंपरा तथा रीति-रिवाज समय और समाज की जरूरत के अनुसार बदलते रहते हैं. किसी भी परंपरा या रीति-रिवाज को जब मन और श्रद्धा से किया जाए तो वह अनुकूल वातावरण उत्पन्न करने में सहायक होता है.

जॉर्ज विल्सन टोप्पो
क्षे. का., रायपुर

भिन्नता/समानता एवं विभिन्न पहलू

भारत एक संस्कृति समृद्ध देश है, जहां विभिन्न प्रकार की संस्कृति एवं परंपराएं हैं जो इसे विश्व के अन्य देशों की तुलना में एक अलग पहचान देती है. भारतीय सभ्यता लगभग 4500 वर्ष पुरानी है. जिसमें लोगों का विश्वास, ज्ञान, संस्कार, परंपराएं, आदतें, खान-पान, आचार-विचार, भाषा, त्योहार, कला एवं क्षमताओं का समावेश होता है. संस्कृति एवं परंपरा में केवल यही अन्तर है कि परंपराएं संस्कृति का ही एक भाग होती हैं जिसे इस प्रकार भी कह सकते हैं कि परंपराएं संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती हैं. इसी प्रकार परंपराओं एवं रीति-रिवाजों में केवल यही अन्तर है कि रीति-रिवाजों को हम दूसरों से प्रभावित होकर अपनाते हैं जो समय विशेष के साथ बदलते जाते हैं जबकि परंपराएं हमें पूर्वजों से विरासत स्वरुप मिलती हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ती जाती हैं.

मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा की खुदाई में भारतीय संस्कृति के विभिन्न तत्व पाए गए थे. भाषा, धर्म, खान-पान, त्योहार, आचार-विचार, वेश-भूषा एवं कला आदि भारतीय संस्कृति एवं परंपराओं के विभिन्न पहलू हैं. विभिन्न क्षेत्रों की संस्कृति एवं परंपराएं एक दूसरे से भिन्न भी होती हैं और कहीं- कहीं इनमें समानताएं भी पायी जाती हैं. आइए, इन विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत चर्चा करते हैं:

भाषा : भारत की राजभाषा हिन्दी है जबकि संविधान की आठवीं अनुसूची में कुल 22 भाषाएं शामिल हैं. इसके अतिरिक्त पूरे देश में लगभग 400 भाषाएं और अनगिनत बोलियां मौजूद हैं. सभी भाषाएं अपने क्षेत्र में विशेष उपयोग की जाती हैं. हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी को विभिन्न प्रकार से बोला जाता है जैसे अवधी, भोजपुरी, बृजवासी, बुन्देली, बघेली आदि. कुछ बोलियां उनके राज्यों और शहरों के नाम पर पड़ जाती हैं जैसे हरियाणा राज्य में हरियाणवी और हैदराबाद की हैदराबादी बोली जो तेलगू भाषा से भिन्न है. कुछ प्रचलित भाषा की लिपि हिन्दी भाषा के समान देवनागरी है. जैसे मराठी एवं हिन्दी भाषा की लिपि देवनागरी है.

धर्म : भारतीय संविधान के अनुसार भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है जहां विभिन्न धर्म एवं सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं. इतिहास के अनुसार हिन्दू और बुद्ध धर्म जैसे धर्म की जन्म स्थली के रुप में भारत को पहचाना जाता है. भारत की अधिकतर जनसंख्या हिन्दू धर्म से संबंध रखती है. हिन्दू धर्म की दूसरी विविधता शैव, शाक्य, वैष्णव और स्मार्त है. तथापि असंख्य धर्म का मर्म एक ही है जो मानवता एवं प्रेम का संदेश देता है. सभी धर्म में ईश्वर की आराधना पर बल दिया जाता है जिसका तरीका आपस में भिन्न होता है. हमारी धार्मिक संस्कृति है कि हम उपवास करें, पूजा करें, गंगा जल अर्पण करें, सूर्य नमस्कार करें, परिवार के बड़े सदस्यों के चरण स्पर्श करें, ध्यान और योग करें तथा भूखे और अक्षम लोगों को अन्न-जल प्रदान करें. देश के कुछ मुख्य धर्म हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, जैन और यहूदी हैं.

खान-पान : खान-पान सामान्यत: क्षेत्र विशेष की पैदावार एवं जलवायु पर निर्भर करता है. भारत के 28 राज्यों में विभिन्न प्रकार के व्यंजनों को पसंद किया जाता है. यदि पूर्व एवं दक्षिण भारत में इडली, डोसा, सांभर और चावल आदि हैं तो पश्चिम और उत्तर में मिला-जुला खाना ही होता है. खानों में इतनी विविधता के बावजूद सभी तरह का खाना सभी स्थानों पर उपलब्ध हो जाता है अर्थात भिन्नता होते हुए भी इसमें भरपूर समानता है.

त्योहार : भारत को त्योहारों का भी देश कहा जाता है. शायद ही वर्ष का कोई माह हो जिसमें कोई न कोई त्योहार किसी न किसी राज्य में न मनाया जाता हो. त्योहार चाहे किसी भी धर्म या सम्प्रदाय का क्यों न हो, उसमें भागीदारी सभी की होती है. अभी तो विदेशों के त्योहार भी भारत में बड़े ही हर्षोल्लास के साथ मनाए जाते हैं. कुछ ऐसे त्योहार हैं जो एक विशेष तारीख को ही आयोजित होता है परन्तु देश के विभिन्न राज्यों में अलग-अलग नामों से मनाया जाता है जैसे प्रति वर्ष 14 जनवरी को मनाया जाने वाला मकर संक्रांति त्योहार. नए वर्ष के त्योहार धर्म एवं प्रान्त के अनुसार मनाए जाते हैं जैसे हिन्दू नव वर्ष, मुस्लिम नव वर्ष, पारसी नव वर्ष एवं मराठी नव वर्ष इत्यादि. तथापि राष्ट्रीय पर्व जैसे गणतंत्र दिवस, स्वाधीनता दिवस और गांधी जयंती को पूरे देश में बिना किसी भेदभाव के मनाया जाता है.

आचार विचार एवं सम्मान की परंपरा : आचार एवं विचार एक ऐसी सांस्कृतिक धरोहर है जो सभी धर्म एवं मजहबों से ऊपर है. सभी धर्म अपने स्वजनों के प्रति आदर एवं स्नेह भाव को प्रधानता देते हैं परन्तु उनकी इस भावना के प्रदर्शन में भिन्नता हो सकती है. आपस में अभिवादन अलग तरह से किया जाता है. यह न केवल भाषायी आधार पर भिन्न है वरन् एक ही भाषा-भाषी के मध्य भी अलग होता है. जैसे लड़कियों द्वारा अपने से बड़ों जैसे माता-पिता, भाई-बहन या

अन्य रिश्तेदार जो आयु में उससे बड़े हों, के चरण स्पर्श करने की परंपरा की बात करें तो पाएंगे कि पूर्वी उत्तर प्रदेश में वे अपनी आयु से सभी बड़ों के चरण स्पर्श करती हैं जबकि पश्चिम उत्तर प्रदेश में इसके विपरीत उसकी आयु से बड़े एवं छोटे उसके चरण स्पर्श करते हैं.

अपने देश में अतिथियों के सम्मान की परंपरा है और हमारे राष्ट्र की महान संस्कृति है कि हम अपने घर आये अतिथियों की सेवा पूरी निष्ठा के साथ करते हैं क्योंकि उन्हें ईश्वर का स्वरुप माना जाता है. चाहे कोई भी धर्म हो, समाज हो, प्रान्त हो, 'अतिथि देवो भव:' की परंपरा का निर्वहन किया जाता है.

वेश-भूषा : हमारे देश में सभी प्रान्तों में अलग-अलग वेश-भूषाएं पहनी जाती हैं. तथापि कभी-कभी कुछ प्रकार के वेश-भूषा रिवाज के रुप में नेताओं या अभिनेताओं से प्रेरित होकर सभी के द्वारा अपना लिया जाता है जैसे नेहरू जैकेट, वी पी सिंह की टोपी, राजीव गांधी का शाल पहनने का तरीका काफी लोकप्रिय हुआ. इसी प्रकार नायक नायिकाओं के केश, नायकों की तरह दाढ़ी मूँछ रखना इत्यादि का चलन अभी भी जारी है.

कला एवं नृत्य : भारतीय नृत्य, संगीत एवं नाट्य की संस्कृति विरासत के रूप में प्राप्त हुई है. विभिन्न प्रान्तों में कला एवं नृत्य के अलग-अलग विधान प्रस्तुत किए जाते हैं. भारतीय संस्कृति के प्रमुख नृत्य भरतनाट्यम, कथक, ओडिसी, मणिपुरी, कुचीपुड़ी, मोहिनीअट्टम एवं कथकली आदि हैं. पंजाबी भाँगड़ा करते हैं, गुजराती गरबा करते हैं, राजस्थानी घूमर करते हैं, आसामी बिहू करते हैं, ओडिशा में ओडिशी नृत्य है जबकि महाराष्ट्र के लोग लावणी का आनन्द लेते हैं. इसी प्रकार संगीत के क्षेत्र में भारतीय शास्त्रीय संगीत का महत्वपूर्ण स्थान है तथापि कला एवं नृत्य एक ऐसी संस्कृति है जो एक देश से दूसरे देश में भ्रमण करती रहती है.

भारत की सभ्यता विश्व की सबसे पुरानी सभ्यता है. भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण तत्व अच्छे शिष्टाचार, तहज़ीब, सभ्य संवाद, धार्मिक संस्कार, मान्यताएँ और मूल्य आदि हैं. अब जबकि हरेक की जीवन शैली आधुनिक हो रही है, भारतीय लोग आज भी अपनी परंपरा और मूल्यों को बनाए हुए हैं. विभिन्न संस्कृति और परंपरा के लोगों के बीच की घनिष्ठता ने एक अनोखा देश, 'भारत' बनाया है. विश्व की पहली और महान संस्कृति के रुप में भारतीय संस्कृति को माना जाता है.

'विविधता में एकता' का कथन यहाँ पर आम है अर्थात् भारत एक विविधतापूर्ण देश है जहाँ विभिन्न धर्मों के लोग अपनी संस्कृति और परंपरा के साथ शातिपूर्ण तरीके से एक साथ रहते हैं. विभिन्न धर्मों के लोगों की अपनी भाषा, खाने की आदत, रीति-रिवाज़ आदि अलग हैं फिर भी वो एकता के साथ रहते हैं. अपनी संस्कृति के लिये भारतीय लोग अत्यधिक समर्पित रहते हैं और सामाजिक संबंधों को बनाए रखने के लिये अच्छे सभ्याचार के लिए जाने जाते हैं.

भारत महात्मा गाँधी की भूमि है जहाँ उन्होंने लोगों में अहिंसा की संस्कृति पल्लवित की है. उन्होंने हमेशा हम लोगों से कहा कि अगर तुम वाकई बदलाव लाना चाहते हो तो दूसरों से लड़ाई करने के बजाय उनसे विनम्रता से बात करो. उन्होंने कहा कि इस धरती पर सभी लोग प्यार, आदर सम्मान और परवाह के भूखे हैं; अगर तुम उनको सब कुछ दोगे तो निश्चित ही वो तुम्हारा अनुसरण करेंगे.

संस्कृति एवं परंपराओं को बनाए रखने में केन्द्र एवं राज्य सरकारों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है. राज्य अपनी सांस्कृतिक परंपराओं एवं धरोहरों को बचाए रखने के लिए आर्थिक रुप से सक्रिय योगदान करते हैं तथा सभी सरकारों में इसके लिए अलग से एक मंत्रालय गठित किया जाता है जो इस दिशा में कार्य करता है. गणतंत्र दिवस पर निकलने वाली परेड के दौरान राष्ट्रीय स्तर पर सभी संस्कृतियों का प्रदर्शन किया जाता है और राज्यों में भी इसी प्रकार से प्रदर्शन किया जाता है जो नई पीढ़ी को उनकी प्राचीन संस्कृति एवं परंपरा का स्मरण कराता रहता है.

स्कूल एवं कालेज शिक्षा के माध्यम से इसमें अपना योगदान प्रदान करते हैं. विद्यार्थियों में इसके प्रति चेतना लाने के लिए शिक्षण संस्थाओं में विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित करायी जाती हैं.

क्लब, सोसायटी एवं गैर-सरकारी संस्थानों द्वारा समय समय पर अपनी संस्कृति एवं परंपराओं के प्रति लोगों में जन-जागरण अभियान चलाए जाते हैं, विभिन्न उत्सव एवं धार्मिक अनुष्ठान आयोजित कराए जाते हैं.

भारत की सामाजिक व्यवस्था महान है जहाँ लोग आज भी संयुक्त परिवार के रुप में अपने दादा-दादी, चाचा, ताऊ, चचेरे भाई-बहन आदि के साथ रहते हैं. पुरानी पीढ़ी के लोग अपनी संस्कृति और मान्यताओं को नयी पीढ़ी को सौंपते हैं. इसलिये सभी बच्चे यहाँ पर अच्छे से व्यवहार करते हैं क्योंकि उनको ये संस्कृति और परंपराएँ पहले से ही उनके माता-पिता और दादा दादी से मिली होती हैं. भारत में लोग आधुनिक हैं और समय के साथ बदलती आधुनिकता का अनुसरण करते हैं फिर भी वो अपनी सांस्कृतिक मूल्यों और परंपरा से जुड़े हुए हैं.

संस्कृति एवं परंपराएं राष्ट्रीय गौरव की परिचायक हैं.

पी. सी. पाणिग्राही,
वित्तीय समावेशन, कें. का. मुंबई

अभिमान एवं गर्व की बात

इस विषय पर लिखना शुरू करने से पूर्व मेरी सोच सर्वप्रथम इस बात पर आकर ठहर गई कि संस्कृति और परंपरा आखिर क्या है? मैं इतना बड़ा विचारक नहीं कि इस पर रोशनी डाल सकूं परंतु मेरी सोच की सीमाओं में मुझे जो ज्ञात हुआ आपके समक्ष रख रहा हूं.

वृहद रूप से धरा के किसी स्थान विशेष पर उत्पन्न और विकसित हो रही सभ्यताओं के स्वभाव और परिवेश के साथ-साथ पीढ़ी दर पीढ़ी स्थापित होने वाली मर्यादाएं हैं, जो उस स्थान विशेष की, जिसका कोई नाम भी हो सकता है, 'संस्कृति' कहा जा सकता है अर्थात संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष से या जाति या धर्म विशेष से अलग है और समग्र रूप से एक सभ्यता के निवासियों के आचार विचार का दर्पण होती है जो समय के साथ-साथ स्थाई हो जाती है तथा उस स्थान विशेष की वह पहचान बन जाती है और उस सभ्यता में रहने वाले लोगों के सतत् बनते समूह की पहचान भी इसी प्रकार से स्थाई होने लगती है जो विचारों, आचरणों, संसाधनों, रहन-सहन, खानपान का केंद्र विशेष बन जाता है. जिस प्रकार हमारे भारत देश के समग्र आचार विचार की एक संस्कृति है जिसमें सबसे ऊपर है सहिष्णुता, क्षमा, सत्य, अहिंसा, आये मेहमान का स्वागत, सम्मान, अभिवादन करना, अपने से बड़ों का आदर करना, आदि. इन्हीं बातों पर विश्व में हमारी पहचान बन चुकी है .

आईए, अब जानें, परंपराएं क्या होती हैं ? बहुत बड़ा विषय है जिस पर ग्रंथ तैयार किये जा सकते हैं क्योंकि परंपरा संस्कृति से थोड़ी पृथक जरूर है जो समय के साथ-साथ उसी सभ्यता में रह रहे व्यक्तियों के समूहों से बने परिवारों, धर्मों और जातियों की पहचान बन जाती है. एक सभ्यता में पनप रहे जनसमूहों के स्वयं के आपसी रिश्तों, त्योहारों, पहनावों, मान्यताओं का रूप ही परंपरा है. शादी में दुल्हन के हाथों में मेंहदी लगाना, घोड़ी पर दूल्हे का आना, शरद पूर्णिमा पर खीर बनाना, रोज सुबह पूजा करना, होली को रंगों से या पानी से खेलना, मकर संक्रांति में पतंगों को उड़ाना, इत्यादि हमारे देश की परंपराएं हैं.

संस्कृति परंपराओं का भण्डार है अर्थात समस्त परंपराएं मिलकर एक संस्कृति का सृजन करती हैं जबकि परंपराओं के समग्र प्रभाव से बनी संस्कृति, देश या उस सभ्यता की पहचान बनती है.

अब संस्कृति पहले है या परंपराएं यह भी सवाल उठता है. परंपराएं आचरण के उन क्रियाओं व प्रतिक्रियाओं का स्थाई रूप है जो समय के साथ कभी लुप्त नहीं होती. विकास की प्रक्रिया के दौरान समय के साथ सभ्यताओं के लक्षणों में कुछ परिवर्तन अवश्य होते रहते हैं परंतु उनका मूल रूप वही रहता है.

प्रारंभ में, संस्कृति में समाहित हमारे देश के आचरणों के बारे में बातें की गयी हैं, जिनमें मेहमान का स्वागत किया जाता है जिसमें प्रत्येक प्रांत की अपनी परंपरा है जैसे मिष्ठान के साथ पेय जल प्रदान करना, पान देकर स्वागत करना. आगंतुक के सम्मान में उसे अंगवस्त्र देना, पारंपरिक टोपी पहनाना, फूल माला पहनाना या फूलों का गुच्छ देना. मेहमान का हाथ जोड़कर अभिवादन करना, अपने से बड़ों का पांव छूकर आदर करना हमारी परंपराओं के प्रमुख स्तंभ हैं.

हमारे भारतवर्ष की सभ्यता का प्राचीनतम होना उसकी समृद्ध संस्कृति का कारण है, मोहनजोदड़ो सभ्यता का ज्ञान होने पर दुनिया को समझ में आया कि यह तो मिस्र की मैसोपोटेमिया के समान समृद्ध सभ्यता रही होगी, जहां आज भारतवर्ष नाम का एक देश है. हमारी जड़ें तो वैदिक काल से हैं. यहां भगवान बुद्ध के कारण अहिंसा का पाठ पढ़ाता बौद्ध धर्म, भगवान महावीर के कारण जग में दया फैलाता जैन धर्म, किसी धर्म विशेष में 10 गुरूओं की परंपरा से फलीभूत जनसेवा के रूप में सिख धर्म हमारे देश की संस्कृति का ही प्रमुख हिस्सा है. गुरू शिष्य परंपरा को कौन भुला सकता है भले ही आज आधुनिकता के दौर में स्कूलों का स्वरूप बदल गया हो परंतु गुरू और शिष्य के बीच के संबंध आज भी नजर आते हैं.

इस लेख का विषय हमें यह भी पूछता है कि क्या हमें हमारी संस्कृति या परंपरा पर अभिमान / गर्व है? जी हां, हमें अपनी संस्कृति पर अभिमान है और अपनी परंपराओं पर गर्व है. अभिमान शब्द एक सशक्त शब्द है जिसमें कमी होने की संभावनाएं नहीं है और हमारी संस्कृति महान है. उसमें परिवर्तन का कोई अवसर नहीं है. वहीं हमारी परंपराएं भले ही समय के साथ-साथ अपने में बदलाव करती हों परंतु उनकी छाप सदैव हमारे आचरण में नजर आती रहेंगी और हमारी सभी परंपराओं पर हमें गर्व है.

ये परंपरायें बनती कैसे हैं ? सोचिए, कभी पहली बार कोई व्यक्ति बीमार हुआ होगा और आज के आधुनिक चिकित्सा की अनुपस्थिति में उसके समाज के बुद्धिजीवियों ने उसे स्वस्थ करने के लिये कई प्रयोग किये होंगे और प्रारंभ हो गया जड़ी बूटियों की पहचान का युग और उसमें बीमार होने पर आज भी काढ़ा नाम से बनाया जाने वाला पेय भी हमारी परंपराओं में निहित है. इसे यूं समझें कि किसी भी क्षेत्र में लोगों के रहन सहन, उनके खानपान, विश्वास को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक ले जाने से वह बात एक परंपरा का रूप ले लेती है. आज भी हम

कहते हैं कि गला खराब हो तो अदरक का काढ़ा, पुदीने का पानी पीना चाहिए, पीलिया हो जाए तो गन्ना खाना चाहिए इत्यादि. इन्हें हम भले ही एक औषधि के रूप में लेते हैं परंतु समय के साथ ये सभी चिकित्सा की कसौटी पर खरी उतरी हैं और यह हमारी एक परंपरा बन गई है क्योंकि इसे हमने अपने पूर्वजों से जाना है और इन्हीं का यथावत ज्ञान हमें अपने वंशजों को देना है और यह परंपरा पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती है.

हमारे देश में विभिन्न धर्मों का होना भी हमारी संस्कृति का हिस्सा है और प्रत्येक धर्म में पूजा करना, धार्मिक त्योहार मनाना, प्रसाद के अलग-अलग रूप हैं जो उनकी स्वयं की परंपराएं हैं और ये सभी परंपराएं मिलकर हमारे देश में सर्वधर्म समभाव का वातावरण तैयार करते हुए देश को धर्मनिरपेक्ष बनाता है जो हमारे देश की सुदृढ़ संस्कृति है, जिस पर हमें बहुत अभिमान है.

जब कभी आप गोवा या केरल या भारत के किसी अन्य राज्य में जाते हैं तो आप पाते हैं कि वहां के मकानों का डिजाइन भी विशिष्ट होता है. जहां बर्फ गिरती है वहां पर ढलान वाली छतें और जहां बाढ़ आने का खतरा रहता है वहां के मकान मचान के समान और जहां भूकंप का खतरा रहता है वहां के मकान लकड़ी और / या बेसमेंट में बने होते हैं, ऐसा क्यों? भारत में इस प्रकार के मकानों का रिवाज कई पीढ़ियों से चला आ रहा है क्योंकि हमारे पूर्वजों ने यह खोज की कि प्राकृतिक आपदाओं वाले क्षेत्रों में किस प्रकार के मकानों में रहना चाहिए और आज पीढ़ी दर पीढ़ी यह परंपरा चली आ रही है. यह हमारी पहचान भी है क्योंकि जब हम ऐसे मकानों को देखते हैं तो हमें बिना पूछे ज्ञात हो ताजा है कि यह कौन सा क्षेत्र है, कौन यहां निवास कर रहे हैं अर्थात प्रकृति भी परंपराओं को बनाने में हमारी मदद करती है जो एक लंबे समय के उपरांत हमारी संस्कृति में शुमार हो जाती है.

खाड़ी क्षेत्र के लोग चोगा पहनते हैं यानि ऐसा परिधान जो गले से पैरों तलक समान होता है और वो अपने सिर पर भी कुछ बांधते हैं, जिसकी चारो ओर एक रिंग सी पहनते हैं. यह पहचान बनी है, रेतीले स्थानों पर रहने वाले लोगों की! जहां बहुत गर्मी पड़ती है. वहीं ठण्डे स्थानों पर रहने वाले लोगों का पहनावा भिन्न होता है. हमारे देश में परिधानों को देखकर उनके धर्म या रहने के स्थान का पता लगाया जा सकता है. यह पहचान पीढ़ी दर पीढ़ी समय के साथ हमारे साथ चली आई है और आगे भी हमारे वंशजों तक जायेगी. इस पहचान को हम बिना किसी रोक टोक या पसंद नापसंद का ध्यान किये बिना अपनाते आये हैं क्योंकि इसे हम अपने समाज, धर्म, पहचान से जोड़ कर देखते हैं. यही तो परंपराएं हैं जो अलग-अलग होकर भी एक साथ मिलकर हमारे देश की संस्कृति बनती हैं और विश्व में हमारे देश को कहा जाता है 'विविधता में एकता वाला देश'.

हमारे देश में ईश्वर पर विश्वास की भी एक परंपरा है. यहां पूजा करने के निराले तरीकों में पीपल के पेड़ को पानी देना, वट वृक्ष के चक्कर लगाते हुए उसे सूत लपेटना, सूर्य को जल अर्पण करना, छठ में जल में खड़े रहकर सूर्य को अर्घ्य अर्पित करना, करवा चौथ में चांद को देखना, दिवाली पर रोशनी कर धन और गाय की पूजा करना, इत्यादि. ये सभी हमारी संस्कृति की पहचान हैं. विभिन्न प्रकार से पूजा करने की परंपराएं समृद्ध हैं. उन पर हमारा विश्वास गहरा है जो हमारे देश को विश्व में सबसे विशेष बनाता है. वहीं विभिन्न धार्मिक अवसरों पर या साप्ताहिक दिनों में व्रत का रखा जाना भी एक महत्वपूर्ण परंपरा है, इससे बड़ी सोच और क्या होगी कि हमारे देश में सप्ताह के नाम भी ग्रहों के नाम पर हैं और ग्रहों की स्थिति के अनुसार यहां भविष्य को जानने का भी प्रयास किया जाता है और इनकी दिशा और दशा के आधार पर व्रत और दान पुण्य करने की प्रथाएं भी यहां विद्यमान हैं. हमारी ये सभी परंपराएं हमारी संस्कृति को और भी समृद्ध और सशक्त बनाती हैं.

कुछ परंपराएं तो शुद्ध रूप से वैज्ञानिक आधार वाली हैं, पीपल के पेड़ के बारे में हमारे पूर्वज कहते थे कि यह पेड़ हमें हर पल, दिन रात, प्राण वायु अर्थात ऑक्सीजन देता है, अत: इसे बचाओ. हमारे देश में ज्ञान की देवी देवताओं को व्यक्ति की दिनचर्या से जोड़ा गया है और चूंकि भगवान, देवी और देवताओं की हमारे देश में सदियों से पूजा होती आ रही है और हमारे पूर्वज हमें भी शिक्षा देना चाहते थे अत: उन्होंने सभी देवी देवताओं के मूर्त रूप के सापेक्ष उनके वाहनों को इस प्रकार से चुना कि धरा पर उन्हें नुकसान ना पहुंचाया जाये और उनके सांकेतिक प्रभावों का ज्ञान भी हमें इसी प्रकार पहुंचाया जाए. हमारे देश में धर्म पर विश्वास रखने वालों की संख्या बहुतायात में है और जो इसे नहीं मानते हैं, वो इन रीतियों का सम्मान तो करते ही हैं. सदियों पहले जब फाउंटेन पेन का आविष्कार नहीं हुआ था तब हमारे पूर्वज मयूर पंख में स्याही को सोख कर पेन की भांति लिखा करते थे. पढ़ाई लिखाई में उस कलम का विशेष स्थान था और शिक्षा की देवी सरस्वती का वाहन मोर बनाया गया ताकि मोर के भविष्य को सुरक्षित रखा जा सके. उल्लू को धन की देवी लक्ष्मी का वाहन बनाया गया. उल्लू रात को उड़ता है, उसकी आँखें रात को जागती हैं. मसलन पूर्वज हमें सूचित करना चाहते थे कि धन की सुरक्षा रात में अवश्य करें अन्यथा वह चोरी हो सकता है. ऐसी ही ना जाने कितनी ही महत्वपूर्ण बातें हैं जिन्हें अब भी समझना शेष है. गाय को मां के रूप में मानना भी एक महत्वपूर्ण परंपरा है क्योंकि यह कह कर हमारे पूर्वजों ने हमें जानकारी दी है कि गाय के दूध, गोबर एवं मूत्र औषधि का ही रूप है और गाय के दूध में इंसान के बच्चे की मां के दूध के समान गुण होते हैं. इसलिए गाय माता का नाम दिया गया और आज भी यह परंपरा कायम है.

वैसे परंपराओं पर तो हम कई ग्रंथ रच सकते हैं परंतु आज जरूरत है अपनी परंपराओं में छुपे हुए ज्ञान को जानने की! लेकिन आज हम केवल उन्हें अपने दायित्व के रूप में निभा रहे हैं. हमारा देश अपनी परंपराओं के आधार पर एक सुदृढ़ता के साथ विश्व में 'विश्व गुरू' के रूप में पहचाना जाने लगा है. विदेशी लोग यहां की परंपराओं को अपनाते जा रहे हैं परंतु हम धीरे धीरे स्वयं को आधुनिकता की दौड़ में झोंकते-झोंकते अपने खानपान, परिधानों, आचरणों की परंपराओं को खोते जा रहे हैं.

प्रदीप सिंह
क्षे.म. प्र. का., दिल्ली

सांस्कृतिक विविधता में एकता

भारत एक विविधतापूर्ण देश है, फिर भी सांस्कृतिक रूप से एक इकाई के रूप में इसका अस्तित्व प्राचीन काल से बना हुआ है. भारतीय संस्कृति का सर्वाधिक व्यवस्थित रूप हमें सर्वप्रथम वैदिक युग में प्राप्त होता है. वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ माने जाते हैं. भारतीय संस्कृति अत्यंत उदात्त, समन्वयवादी, सशक्त एवं जीवन्त रही है. यह वर्गो, जातियों, सम्प्रदायों में विभाजित होने के बावजूद एक सांस्कृतिक सूत्र में बंधी हुई है. इसके विभिन्न भागों में भौगोलिक अवस्थाओं, सामाजिक और उनकी संस्कृतियों में काफी अंतर है. भारतीय संस्कृति अति प्राचीन और अपनी विशिष्टताओं सहित विकसित होती रही है. इसके कुछ विशेष लक्षण हैं, जिन्होंने भारतीय एकता की संस्कृति की जड़ों को और भी सुदृढ़ किया है. भारतीय संस्कृति की धारा अविच्छिन्न रही है. भारतीय संस्कृति का एक अलौकिक तत्व इसकी सहिष्णुता है. यहां सहिष्णुता का सामान्य अर्थ सहनशीलता नहीं वरन् गौरवपूर्ण शांत विशाल मनोभाव है. भारतीय संस्कृति की इन्हीं विशेषताओं ने इस देश को एक सशक्त एवं सम्पूर्ण भावनात्मक एकता के सूत्र में बांध रखा है. आज भारतवासियों ने 'आचार्य विनोबा भावे' की इस पंक्ति को अपने जीवन में अच्छी तरह से चरितार्थ कर लिया है-

'हम सबको हाथ की पाँच अंगुलियों की तरह रहना चाहिए'

भारत की एकता का सबसे सुदृढ़ स्तम्भ इसकी संस्कृति है. यहां रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा और त्योहारों-उत्सवों की विविधता के पीछे सांस्कृतिक समरसता का तत्व दृष्टिगोचर होता है. भारतीय संस्कृति का एक शक्तिशाली पक्ष इसकी धार्मिक एकता है. भारत के सभी धर्मों और संप्रदायों में बाह्य विभिन्नता भले ही हो, किन्तु उन सबकी आत्माओं का स्त्रोत एक ही है. भाषाओं के बीच पारस्परिक संबंध व आदान-प्रदान, साहित्य के मूल तत्वों, स्थायी मूल्यों और ललित कलाओं की मौलिक सृजनशील प्रेरणाएं सब हमारी सांस्कृतिक एकता की मौलिकता का प्रमाण है. भारत जैसे उपमहाद्वीप में विभिन्न मतों और संस्कृतियों की लहर हमारे वर्तमान और भविष्य की ओर इंगित करती है. भारत की सांस्कृतिक परंपरा बहुत सम्पन्न है. भारतीय संगीत ने भी विश्व में अपना स्थान बना लिया है. संगीत, ललित कला, नाटक, रंगमंचन और शिल्पकला आदि सभी सांस्कृतिक परंपरा से प्राप्त हुए हैं. हमारी सांस्कृतिक परंपराओं की उत्कृष्टता के कारण ही आज पश्चिमी देश हमारे आगे नतमस्तक हो जाते हैं.

भारत देश त्योहारों का देश है. यहां विभिन्न प्रकार के त्योहार मनाए जाते हैं. पंजाब में बैसाखी, उत्तर प्रदेश में लठमार होली, केरल में ओणम, तमिलनाडु में पोंगल या असम में बिहू जैसे त्योहार काफ़ी हर्ष उल्लास के साथ मनाए जाते हैं. यहां विभिन्न धर्मों के लोग जैसे हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई और जैन धर्म लोग एकता के साथ जीवन यापन करते हैं. भारत के विभिन्न भागों में खाने-पीने का ढंग उनकी संस्कृति के मुताबिक अलग-अलग है. बंगाल में जहां मछली-चावल प्रसिद्ध है वहीं केरल, तमिलनाडु में इडली और डोसा, पंजाब में मक्के की रोटी और सरसों का साग, महाराष्ट्र की झुणका-भाकर. अनेक विभिन्नताओं के बावजूद भी भारत की पृथक सांस्कृतिक सत्ता रही है. हिमालय सम्पूर्ण देश के गौरव का प्रतीक है, तो गंगा, जमुना और नर्मदा जैसी नदियों की स्तुति भारत के लोग प्राचीनकाल से करते आ रहे हैं. उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक सम्पूर्ण भारत में जन्म, विवाह और मृत्यु के संस्कार विविध प्रकार के होते हुए भी उनमें समानता है. विभिन्न रीति-रिवाज, आचार-विचार और तीज-त्योहारों में भी समानता है. भाषाओं की विविधता अवश्य है फिर भी संगीत, नृत्य और नाटक के मौलिक स्वरूपों में आश्चर्यजनक समानता है. संगीत के सात स्वर और नृत्य के त्रिताल सम्पूर्ण भारत में समान रूप से प्रचलित हैं. भारत अनेक धर्मों, संप्रदायों, मतों और पृथक आस्थाओं एवं विश्वासों का महादेश है, तथापि इसका सांस्कृतिक समुच्चय और अनेकता में एकता का स्वरूप संसार के अन्य देशों के लिए विस्मय का विषय रहा है.

हमारी सांस्कृतिक एकता के अन्य उदाहरण दक्षिण भारत के मंदिर, खजुराहो, अजन्ता और एलोरा की गुफाएँ हैं. ये भारत की उदात्त शिल्प कला और वास्तुकला के उत्कृष्ट नमूने हैं. ऐसा माना जाता है कि दक्षिण और उत्तर की शैली को मिलाकर भारत में लगभग 250 राग प्रचलित हैं. रविशंकर जैसे महान संगीतज्ञों ने भारतीय संगीत द्वारा पूर्व और पश्चिम के संगीत के बीच सेतु का निर्माण

किया है. भारतीय सांस्कृतिक एकता की अन्य विशेषताएं, नृत्यों में शैली विभिन्नता और भावनात्मक सम्पन्नता है. शास्त्रीय नृत्यों, लोक नृत्यों और कबीलों, प्रान्तों द्वारा हमारी कलात्मक अभिव्यक्ति, आध्यात्मिकता प्रकट होती है. इन भिन्नताओं के कारण ही भारत में अनेक सांस्कृतिक उपधाराएँ विकसित होकर पल्लवित और पुष्पित हुई हैं. यह विभिन्नता और विविधता भारत को एक सुंदर पारम्परिक और सांस्कृतिक देश बनाती हैं. यहाँ सभी अपनी जीवन शैली और सांस्कृतिक धरोहर के साथ मिलजुल कर रहते हैं. भारत एक वृहद देश है, कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक अनगिनत लोकगीत, संस्कार, संस्कृति और लोकगाथाएं प्रचलित हैं.

यहाँ हर प्रदेश की अपनी सांस्कृतिक परंपरा है. यहाँ हर प्रदेश की संस्कृति एक दूसरे से भिन्न है. बंगाली संस्कृति भारत में सबसे अमीर संस्कृतियों में से एक मानी जाती है. बंगाली संस्कृति की जड़ उसका बंगाली संगीत, सिनेमा और बंगाली साहित्य में है. स्वादिष्ट बंगाली व्यंजन हमारे देश की संस्कृति का बहुत अहम् हिस्सा है. बंगाली महिलाएं पारंपरिक साड़ी और सलवार कमीज पहनती हैं. लड़कों पर धोती, कुर्ता, पंजाबी, शेरवानी त्योहारों के दौरान देखे जाते हैं. यहाँ का मुख्य भोजन मछली, चावल है. यहाँ की मिठाइयाँ पूरे देश में बहुत प्रसिद्ध हैं जैसे- रसगुल्ला, मिस्टी दोई, संदेश, कलाकंद आदि. कश्मीर की गायन और नृत्य की मद्धम लय यहाँ की खूबसूरत सांस्कृतिक वातावरण को और भी मनमोहक बना देती है. यहाँ के लोग बहुत रंगीन वेश-भूषा पहना करते हैं और खाने-पीने के शौकीन हैं. परंपरा और संस्कृति तथा प्रकृति का अनूठा संगम है कश्मीर. यहाँ अमरनाथ यात्रा, बाहु मेला, ईद आदि बहुत से उत्सव होते हैं. पंजाब वीरों और किसानों का प्रदेश है. यहाँ की सांस्कृतिक विरासत में वीरों और किसानों का बहुत बड़ा योगदान रहा है. यहाँ के लोग मेहनती होते हैं त्योहारों पर नाचते हैं और रंग-बिरंगी पोशाक पहनते हैं. यहाँ का प्रमुख नृत्य भांगड़ा और गिद्दा है, जो हर खुशी के मौके पर पूरे जोश के साथ किया जाता है. उत्तर प्रदेश एक बहुजनसंख्या वाला राज्य है, जहां हर कोस पर भाषा और पानी बदल जाता है. यहाँ की सांस्कृतिक विविधता देखते ही बनती है. यहाँ नदियों, पेड़ों और सूरज की पूजा की जाती है. साल के शुरुआत

से ही मकरसंक्रांति, बसंत पंचमी, होली, तीज, जन्माष्टमी, दिवाली, छठ न जाने कितने त्योहार इस प्रदेश में मनाए जाते हैं. राजस्थान की संस्कृति यहाँ के वासियों को जुझारू और लड़ाकू बना देती है. रंगों और गीतों का यह प्रदेश है. राजा-रजवाड़ों की इस भूमि में आज भी लोक कथाओं का विशाल भंडार है. यहाँ की संस्कृति में गीत-संगीत, हस्तशिल्प का बहुत बड़ा योगदान है. यहाँ की बांधनी साड़ियां भारत की रंगोली समान संस्कृति की द्योतक हैं. सांगानेरी कोटा, जयपुरी लहरिया, चुंदरी उन प्रमुख पोशाकों में से हैं, जो यहाँ के लोग शान से पहनते हैं. महाराष्ट्र राज्य की विविधता अपने आप में अनूठा उदाहरण है. हर धर्म और विविधता को अपनाते हुए इस प्रदेश ने अपनी संस्कृति नहीं छोड़ी. लावणी यहां का मुख्य नृत्य है. गणेश पूजा यहाँ का मुख्य उत्सव और पूरनपोली, खांडवी, श्रीखंड मुख्य व्यंजन है. केरल, तमिलनाडु और आन्ध्र प्रदेश अर्थात् पूरे दक्षिण भारत को 'धर्म का स्थान' कहा जाता है. यहाँ धार्मिक संस्कृति की बहुलता है. यहाँ के लोगों का मुख्य व्यंजन इडली, डोसा, उत्तपम, सांभर, पायसम आदि है. यहाँ का मुख्य नृत्य भरतनाट्यम है. वैसे हर प्रदेश की विविधता यदि गिनायी जाए तो शायद पृष्ठ कम पड़ जाएं लेकिन भारत की विविधता में एकता का कोई सानी नहीं है.

भारतीय संस्कृति विश्व की सर्वाधिक प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृति है. अन्य देशों की संस्कृतियाँ तो धारा के साथ-साथ नष्ट होती रही हैं, किन्तु भारत की संस्कृति आदिकाल से ही अपने परंपरागत अस्तित्व के साथ अजर-अमर बनी हुई है. इसकी उदारता तथा सर्वसमावेशी गुणों ने अन्य संस्कृतियों को समाहित तो किया है, किन्तु अपने अस्तित्व के मूल को भी सुरक्षित रखा है. हमारी सांस्कृतिक एकता की महानता के कारण ही आज पश्चिमी लोग हमारी संस्कृति के प्रति आकर्षित हो रहे हैं. देश के युवा पीढ़ी का दायित्व है कि वह सांस्कृतिक एकता को सुदृढ़ करने के प्रयास करें और उन्नति का मार्ग प्रशस्त करें, ताकि विश्व के सम्मुख आदर्श प्रस्तुत हों.

संतोष कुमार राम
क्षे. का., रायपुर

भारतीय स्थापत्य परंपरा

भारतीय स्थापत्य एवं वास्तुकला की सबसे ख़ास बात यह है कि इतनी विविधता और समय अंतराल होने के बाद भी एक निरंतरता देखने को मिलती है. भारतीय स्थापत्य की विविधता सिर्फ़ इसकी भारतीयता नहीं है, वैश्विक प्रभाव की वजह से भी यह विविधता पाई जाती है. भारत के स्थापत्य को ये वैश्विक दृष्टि, यहां समय-समय पर हुये बाहरी आक्रमणों के बाद स्थापित हुये शासकों द्वारा बनवाए गए मंदिरों, मस्जिदों, मीनारों, स्तंभों और इमारतों की वजह से तो मिली ही है, लेकिन इसमें बहुत बड़ा योगदान भारत की सनातन संस्कृति का भी रहा है, जिसने 'वसुधैव कुटुंबकम्' का सिद्धांत दिया. इस सिद्धांत का परिणाम यह हुआ कि हमारे देश के विभिन्न शासकों ने स्थापत्य में वैश्विक विशेषताओं को खुले दिल से अपनाया. आगे हम पाएंगे कि भारत का पूरा स्थापत्य सिर्फ़ भारत का नहीं है, इसमें फारसी, ईरानी, अफगानी, इस्लामिक, यूरोपियन एवं मध्य-पूर्व के स्थापत्य की स्पष्ट झलक भी दिखाई देती है.

यदि भारत के स्थापत्य परंपरा की शुरुआत की बात की जाए तो इसकी शुरुआत हड़प्पा सभ्यता से मानी जाती है, क्योंकि भारत में पहली ज्ञात सभ्यता हड़प्पा ही है. माना जाता है कि इसी दौरान पहली बार मनुष्य ने नगर, मकान, मंदिर, सभागार, स्नानागार इत्यादि के रूप में स्थापनाएं की थीं. ये सभ्यता आज की सिंधु नदी के आसपास के इलाक़ों में स्थित थी और यह विश्व की सबसे प्राचीनतम 4 सभ्यताओं में से मानी जाती है. हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, कालीबंगा इत्यादि इस सभ्यता के सबसे प्रमुख नगर थे, जिनमें स्थापत्य की उन्नत तकनीकें पाई गई हैं. यहां की इमारतें पक्की ईंटों की बनाई जाती थीं, निर्माण में पत्थर और लकड़ी का भी प्रयोग किया जाता था और ऐसा किसी भी तत्कालीन सभ्यता में नहीं हुआ था. मोहनजोदड़ो की सबसे बड़ी इमारत उसका स्नानागार था.

सिंधु सभ्यता के बाद भारतीय स्थापत्य परंपरा को नया आयाम मिला मौर्यकाल में! जब मौर्य शासकों की प्रेरणा से कलाकृतियों और स्थापत्य को प्रोत्साहन मिला. इस दौरान स्थापत्य में लकड़ी का प्रयोग काफ़ी बढ़ गया और पत्थरों पर पॉलिश करने की कला का भी विकास हुआ. इस काल की प्रमुख स्थापनाओं में सबसे प्रमुख स्तूप हैं, जिन्हें धार्मिक स्थल के रूप में विकसित किया गया था. इस काल के प्रमुख शासक अशोक ने 30 से अधिक स्तूपों का निर्माण कराया था, जिनमें सांची, भरहुत,बोधगया के स्तूप प्रसिद्ध हैं. जिनमें से प्रमुख ' अशोक ' स्तंभ है. भारत का राष्ट्रीय चिह्न भी इसी अशोक स्तंभ से लिया गया है. इस काल में सबसे पहले विदेशी स्थापत्य का प्रभाव भारत की स्थापत्य परंपरा पर पड़ा जिनमें ग्रीक, फारसी और मिस्र संस्कृतियों का प्रभाव प्रमुख रूप से देखने को मिलता है.

रामपुरवा का स्तंभ, अशोक स्तंभ, सांची स्तूप

महान सम्राट अशोक की मृत्यु के थोड़े समय बाद ही मौर्य वंश का पतन हो गया. इसके बाद उत्तर भारत में शुंग और कुषाणवंशों और दक्षिण में सातवाहन वंश का शासनकाल आया, इस दौरान कला स्मारक स्तूप, गुफा मंदिर (चैत्य), विहार, शैलकृत गुफाओं आदि का निर्माण किया गया जो आज भी विश्व प्रसिद्ध हैं. इस काल में ओडिशा में जैनियों ने गुफा मंदिरों का निर्माण भी कराया. अजंता की कुछ गुफाओं का निर्माण भी इसी काल के दौरान हुआ, इस काल के गुफा मंदिर काफी विशाल हैं. इसी काल के दौरान गांधार मूर्तिकला शैली का भी विकास हुआ, जिसे कुषाणों का संरक्षण मिला. इस शैली को ग्रीक-बौद्ध शैली भी कहते हैं. इसी काल के दौरान विकसित एक अन्य शैली - मथुरा शैली गांधार से भिन्न थी. सातवाहन वंश ने गोली, जग्गिहपेटा, भट्टीप्रोलू, गंटासाला,नागार्जुन कोंडा और अमरावती में कई विशाल स्तूपों का निर्माण कराया.

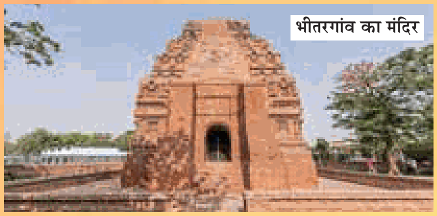
भीतरगांव का मंदिर

उक्त शासकों के बाद गुप्त काल में मंदिरों के निर्माण और स्थापत्य में बहुत प्रगति हुई. गुप्त शासकों ने न सिर्फ़ मंदिर बल्कि कला की विविध विधाओं जैसे वास्तु, स्थापत्य, चित्रकला, मृदभांड, कला आदि में भी अभूतपूर्व प्रगति की थी. लेकिन गुप्तकालीन स्थापत्य कला के सर्वोच्च उदाहरण तत्कालीन मंदिर थे. मंदिर निर्माण कला का जन्म भी यहीं से माना जाता है. हालांकि इससे पहले भी मंदिर बने लेकिन जिन भव्य मंदिरों को स्थापत्य का उत्कृष्ट नमूना माना जाता है वो इसी काल में बनना शुरू हुए. गुप्तकालीन मंदिर छोटी - छोटी ईटों एवं पत्थरों से बनाये जाते थे. इस काल के सर्वश्रेष्ठ मंदिरों में उत्तर उदेश के कानपुर जिले में 'भीतरगांव का मंदिर' है.

दशावतार मंदिर (देवगढ़)

दशावतार मंदिर-देवगढ़

गुप्त शासकों के बाद चोलों ने द्रविड़ शैली को विकसित किया और उसको चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया. राजाराज प्रथम द्वारा बनाया गया तंजावुर का शिव मंदिर द्रविड़ शैली का उत्कृष्ट नमूना है. इस काल के दौरान मंदिर के अहाते में गोपुरम नामक विशाल प्रवेश द्वार का निर्माण होने लगा. पत्थर की मूर्तियों का मानवीकरण चोल मूर्तिकारों की दक्षिण भारतीय कला की महान देन थी.

राजेश्वर मंदिर

सल्तनत काल में भारतीय स्थापत्य कला के क्षेत्र में जिस शैली का विकास हुआ, वह भारतीय तथा इस्लामी शैलियों का मिश्रण थी. इसलिए स्थापत्य कला की इस शैली को 'इण्डो इस्लामिक' शैली कहा गया. हालांकि फारसी, ग्रीस और मिश्र की संस्कृतियों का प्रभाव भारत की स्थापत्य शैली में मौर्यकाल से ही देखने को मिलता है लेकिन भारत की स्थापत्य शैली में वैश्विक प्रभाव इसी दौरान सबसे ज़्यादा देखने को मिलता है. इस दौरान भारतीय एवं ईरानी शैलियों का मिश्रण होने लगता है और क़िला, मक़बरा, मस्जिद, महल एवं मीनारों में नुकीले मेहराबों-गुम्बदों तथा संकरी एवं ऊँची मीनारों का प्रयोग होने लगा.

सुल्तानों, अमीरों एवं सूफी सन्तों के स्मरण में मक़बरों के निर्माण की परंपरा की भी शुरुआत हुई. इमारतों में पहली बार वैज्ञानिक ढंग से मेहराब एवं गुम्बद का प्रयोग भी किया गया. इमारतों की सजावट में जीवित वस्तुओं के चित्रण पर रोक होने के कारण उन्हें सजाने में अनेक प्रकार की फूल-पत्तियाँ, ज्यामितीय एवं क़ुरान की आयतें खुदवायी जाती थीं.

कुतुब मीनार

दिल्ली सल्तनत काल में प्रचलित वास्तुकला 'भारतीय इस्लामी शैली' का विकास मुग़ल काल में हुआ. मुग़लकालीन वास्तुकला में फ़ारस, तुर्की, मध्य एशिया, गुजरात, बंगाल, जौनपुर आदि स्थानों की शैलियों का अनोखा मिश्रण हुआ था. मुग़लकालीन स्थापत्य कला के विकास और प्रगति की आरम्भिक क्रमबद्ध परिणीती 'फ़तेहपुर सीकरी' आदि नगरों के निर्माण में और चरम परिणीती शाहजहाँ के 'शाहजहाँनाबाद' नगर के निर्माण में दिखाई पड़ती है. मुग़ल काल में वास्तुकला के क्षेत्र में पहली बार 'आकार' एवं 'डिजाइन' की विविधता का प्रयोग तथा निर्माण की साम्रगी के रूप में पत्थर के अलावा पलस्तर एवं गचकारी का प्रयोग किया गया. सजावट के क्षेत्र में संगमरमर पर जवाहरात से की गयी जड़ावट का प्रयोग भी इस काल की एक विशेषता थी.

कुतुब मीनार

मुगलों के शासन काल के बाद भारत में अग्रेज़ों का शासन आया, अंग्रेज़ी स्थापत्य ने भारत में यूरोपीय शैली को प्रधानता दी. देश के कुछ हिस्सों में फ्रांसीसी और पुर्तगाली शासन भी रहा. ये सभी स्थापत्य मूलतः गॉथिक शैली पर बनाए गए जिसमें इमारतों का ऊपरी हिस्सा नुकीला बनाया जाता है. नई दिल्ली का राष्ट्रपति भवन इस आधुनिक स्थापत्य का बेज़ोड़ नमूना है. मुंबई के फोर्ट इलाक़े की बहुत सी इमारतें इसी स्थापत्य की उदाहरण हैं. गोवा और पाँडिचेरी की बहुत सी इमारतें पुर्तगाली और फ्रांसीसी शासकों द्वारा बनाई गई हैं.

कुल मिलाकर भारतीय स्थापत्य पूरे विश्व के स्थापत्य को मिलाकर बनाया गया विविधता और निरंतरता का अद्भुत संगम है.

आशीष कुमार गुप्ता
क्षे. म. प्र. का., अहमदाबाद

मान्यताएँ एवं पालन

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से है. इसकी परंपराएँ अनंत काल से चली आ रही हैं. भारत की संस्कृति विविधताओं से परिपूर्ण है. यहाँ हिन्दू, सिख, जैन, बौद्ध आदि विभिन्न धर्म समान रूप से पाये, अपनाये व आदर किए जाते हैं. परंपरा का शाब्दिक अर्थ 'बिना व्यवधान के श्रृंखला रूप में जारी रहना' होता है. इतिहास में देखा गया है कि जो परिणाम एक प्रकार की एक घटना से निकलता है वही परिणाम उसी प्रकार की दूसरी घटना से भी निकलता है. वे परिणाम जो अनेकों घटनाओं के परिणामस्वरूप प्राप्त व अनुभव सिद्ध होते हैं, वही परंपराएँ बन जाती हैं. भारतीय इतिहास में ऐसे उदाहरणों की भी कमी नहीं है जो सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वंतर व वंशानुचरितों द्वारा प्राचीन परंपरा का संकलन है. भारतीय संस्कृति की परंपराएँ बिना किसी परिवर्तन के एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचारित होती रहती हैं. जैसे भागवत पुराण में वेदों के वर्गीकरण और परंपरा द्वारा इसके हस्तांतरण का वर्णन है. भारतीय संस्कृति में ज्ञान के विषय आध्यात्मिक, कलात्मक या शैक्षणिक होते हैं. भारतीय गुरु शिष्य परंपरा इतनी प्रगाढ़ थी कि इसमें केवल गुरु के प्रति ही श्रद्धा नहीं रखी जाती बल्कि उनके पूर्व के तीन गुरुजनों अर्थात गुरु (वर्तमान गुरु), परमगुरु (वर्तमान गुरु के गुरु), परपरमगुरु (परमगुरु के गुरु) व परमेष्टिगुरु (परपरमगुरु के गुरु) के प्रति भी श्रद्धा रखी जाती है.

परंपराओं के बनाने और पनपने के दौरान असंख्य राष्ट्रों का जन्म, विकास और नाश होता रहा है. यह क्रिया विशाल भूभाग में, जिसमें सैकड़ों बार जल की जगह स्थल और स्थल की जगह जल, गाँव की जगह जंगल और जंगल की जगह गाँव, आँशिक सृष्टि और आँशिक प्रलय होते रहे हैं. शक्तिशाली से शक्तिशाली देश जल में विलीन हो गये और समुद्र सूखकर महाद्वीप बन गये. इतने लंबे कालखंड और इतने विस्तृत भूभाग पर असंख्य प्रकार के प्राणी व वनस्पतियाँ उत्पन्न हुईं और नष्ट हो गईं. ज्ञान-विज्ञान के इस अथाह समुद्र को इस काल के भीतर कितने ही देवासुरों ने मथा, कितने ही रत्न निकाले, यह सब भी परंपरा के अंतर्गत आते हैं.

समस्त राष्ट्रों का जन्म व पालन पोषण उनकी अपनी संस्कृति व परंपरा द्वारा ही होता है. सभी प्राचीन राष्ट्रों की सृष्टि की कथा उन्हीं की संस्कृति के अनुकूल होती है. धर्मानुकूल आचरण, सदाचार व महान पूर्वजों के जीवन चरित्र सभी राष्ट्रों में आदर्श माने जाते हैं. ईसाई धर्म बाद में अपनाने वाले अंग्रेजों में परंपरा की यह विशेषता नहीं मिलती, क्योंकि उनकी प्राचीन परंपरा नष्ट हो चुकी है. भिन्न-भिन्न देशों और भिन्न-भिन्न जातियों के लोगों द्वारा धर्म परिवर्तन के कारण मुसलमानों की भी प्राचीन परंपरा नहीं रही. अपवाद स्वरूप, चीन और जापान के बौद्ध धर्म अपनाने के बाद भी उनकी प्राचीन परंपराएँ नष्ट नहीं हुईं. प्राचीन राष्ट्रों को जिस प्रकार अपनी परंपरा और उसका परिचय देने वाले पुराणों पर गर्व है, उसी प्रकार नये राष्ट्रों को अपने कल के इतिहास का उससे भी अधिक अभिमान है. परंतु, इसमें कोई संदेह नहीं है कि अभी इन राष्ट्रों की आयु इतनी नहीं है कि वे अपनी कोई परंपरा बता सकें.

भारतीय परंपरा में अनेकों ऐसी विशेषताएं हैं जो विश्व की अन्य प्राचीन परंपराओं से बिल्कुल भिन्न हैं. भारतीय परंपरा में सृष्टि का वर्णन सबसे निराला है. उसमें वर्णित राजवंश भारतवर्ष या आर्यावर्त के भीतर के ही हैं. यद्यपि, महाभारत के युद्ध में तुर्किस्तान और चीन की सेनाओं के शामिल होने का भी वर्णन मिलता है. पाण्डवों और कौरवों की दिग्विजय में भारतवर्ष के बाहर के भी कुछ देशों के नाम हैं, परन्तु लीला क्षेत्र भारत की पुण्य भूमि ही है. वैदिक साहित्य में भी जो ऐतिहासिक अंश हैं वह इसी देश से संबंध रखने वाले हैं.

भारत की सबसे बड़ी परंपरा देश की सर्वांगीण पवित्रता की भावना है. यहाँ के पहाड़, जंगल, नदी, नाले, पेड़, पल्लव, ग्राम, नगर, मैदान, यहाँ तक की टीले भी पवित्र तीर्थ हैं. द्वारका से लेकर कामरूप कामक्षा तक और बद्री-केदार से लेकर कन्याकुमारी या धनुषकोटि तक सैकड़ों तीर्थ और देव स्थान हैं. यहाँ के जलचर, स्थलचर, गमनचर सबमें पूज्य और पवित्र भावना का अस्तित्व माना गया है. लोग अपने देश से प्रेम करते हैं. प्रत्येक भारतीय अपनी मातृभूमि को पूजता है, चाहे वह मूर्खता से ऐसा करता हो और चाहे समझ-बूझकर, पर वह भक्ति भाव से अपने देश के एक-एक अंग और एक एक पदार्थ की पूजा करता है, उसके सामने मस्तक नवाता है. विष्णु पुराण में कहा गया है:

अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने
यतोहि कर्मभूरेषा ततोऽन्या भोगभूमय:
कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्य सञ्चयात्।।

यहाँ के निवासियों की धारणा थी कि मनुष्य तो भारतवर्ष में ही जन्म लेते हैं. बाहर के लोगों को किन्नर, गंधर्व, नाग, असुर, राक्षस आदि कहा जाता था. भारतीय परंपरा के अनुसार मनुष्य का जन्म ही सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि वह कर्म करके मुक्ति को प्राप्त करने की सामर्थ्य रखता है, जबकि अन्य लोग केवल कर्मानुसार भोग ही करते रहते हैं.

इस दृष्टि से भारत की प्रत्येक अंग को तीर्थ की तरह सदा से पवित्र समझा जाता है.

भारतीय परंपरा में तिथि, दिन, मुहूर्त सभी पवित्र माने जाते हैं. विशेष अवसरों पर सनातन काल से विशेष काम होते आये हैं. इनके लिये ज्योतिष शास्त्र का उच्चकोटि का ज्ञान भी प्राचीन ऋषियों ने दीर्घकालीन परिशीलन द्वारा प्राप्त किया था. अनेकों विद्याओं के लोप हो जाने पर भी साहित्य में यत्र-तत्र उसकी चर्चा आज भी मौजूद है, जिससे परंपरा के नष्ट हो जाने पर भी उनके अस्तित्व का पता लगता है. कभी-कभी परंपराओं के नष्ट हो जाने पर आवश्यकतानुसार उसका पुनरारंभ भी हो जाता है, जैसे गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है:

एवं परंपरा प्राप्तं इमम राजर्षयो विद:
स कालेनेह महता योगो नष्ट: परन्तप।।

जो राजयोग प्राचीन काल में विद्वान राजर्षियों को ज्ञात था और कालचक्र के प्रभाव से बीच में जिसकी परंपरा नष्ट हो गई थी, उसका पुनरुद्धार भगवान कृष्ण ने गीता द्वारा पुन: किया और भागवत धर्म के नाम से उसकी फिर से स्थापना कर दी. परंपरा से प्राप्त यह अमूल्य धन विभिन्न भारतीय साहित्यों में निहित है. ज्ञान, सदाचार, कलाएँ जो कुछ साहित्य के विविध रूपों में विद्यमान है, उनके लिये हम प्राचीन विद्वानों और ऋषि मुनियों के कृतज्ञ हैं. उन्हीं की कृपा से आज हमको श्रुति, स्मृति, वेदाँग, चौसठ महाविद्या और कलाओं के मूल तथ्यों का ज्ञान हो सका अथवा कम से कम उनके अस्तित्व का पता लग सका.

हम प्रात: उठकर अपने दोनों हाथों को देखते हैं और उसमें ईश्वर का दर्शन करते हैं. धरती पर पैर रखने से पहले धरती माँ को प्रणाम करते हैं, क्योंकि जो धरती माँ हमें धन-धान्य से परिपूर्ण करती है, जो पालन पोषण करती है, उसी पर हम पैर रखते हैं. इसीलिए धरती पर पैर रखने से पूर्व उसे प्रणाम कर उससे माफ़ी मांगते हैं. सूर्य ग्रहण के समय घर से बाहर न निकलने की परंपरा के पीछे भी वैज्ञानिक तथ्य छिपा हुआ है. क्योकि सूर्य ग्रहण के समय सूर्य से हानिकारक किरणें निकलती हैं जो हमारे लिए घातक होती हैं. हमें सूर्योदय से पहले उठना चाहिए क्योंकि इस समय सूरज की किरणों में भरपूर विटामिन 'डी' होती है जो हमारे शरीर के लिए लाभकारी है और ब्रह्म मुहूर्त में उठने से हम पूरे दिन तरोताजा रहते हैं तथा आलस हमारे पास भी नहीं फटकता. हमारे पुराणों में प्रकृति को माता का रूप माना गया है. हमने कुछ पेड़ों यथा बरगद, पीपल व तुलसी को देवता तथा नदियों को देवी का रूप माना है. यह कोई अन्धविश्वास नहीं है बल्कि इसके पीछे यह तथ्य छुपा है कि यदि कोई व्यक्ति किसी की पूजा करता है तो वह कभी भी उसको नुकसान नहीं पहुंचा सकता.

घर में पूजा पाठ करते समय धूप, अगरबत्ती, ज्योति जलाते हैं तथा शंख बजाते हैं. इन सबके पीछे वैज्ञानिक तथ्य छुपा हुआ है. ऐसा माना जाता है कि शंख बजाने से शंख-ध्वनि जहाँ तक जाती है वहां तक की वायु से समस्त कीटाणु नष्ट हो जाते हैं. हमारे यहाँ चारो धाम घूमने की परंपरा है. इस परंपरा के पालन करने से हमें देश के भूगोल का ज्ञान होता है, पर्यावरण के सौंदर्य का बोध होता है. इस प्रकार की यात्रायें हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होती हैं तथा इससे हमारा मन भी प्रसन्न रहता है.

हमारे सभी रीति-रिवाज़ और त्योहार हमारे संबंधों को मजबूत करते हैं, जैसे रक्षाबंधन भाई बहन के प्रेम को बढ़ाता है. करवाचौथ दांपत्य जीवन में मधुरता लाता है. छठ पूजा में माँ अपने बच्चों की लम्बी उम्र के लिए व्रत करती है. भारतीय संस्कृति से प्रभावित विदेशी पर्यटक मन की शांति के लिए भारत आते हैं और यहाँ आने पर उन्हें एक अजीब से सुकून का अनुभव होता है. हमारी भारतीय संस्कृति में माता-पिता और गुरु के पैर छूने की परंपरा है. माता-पिता और बड़ों को अभिवादन करने से मनुष्य की चार चीजें यथा आयु, विद्या, यश व बल बढ़ता है.

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविन:
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्धर्मो यशो बलम.

सज्जन और श्रेष्ठ लोगों का अपना एक प्रभा मंडल होता है और जब हम अपने गुरु और अपने से बड़ों के पैर छूते हैं तो उसकी कुछ अच्छाइयां हमारे अंदर भी आ जाती हैं. संक्षेप में हम कह सकते हैं कि परंपराएं सामाजिक नियंत्रण हेतु अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं. यह सीखने की प्रक्रिया व सामाजिक परिस्थितियों से अनुकूलन में हमारी मदद करती हैं. सामाजिक जीवन में एकरूपता उत्पन्न करने व सामाजिक संगठन के स्वरूप को सुदृढ़ करने के अतिरिक्त ये व्यक्तित्व व समाज निर्माण में भी अहम भूमिका अदा करती हैं. परंपरा की शक्ति इसी में निहित है कि ये सामाजिक अभिमति के बल पर व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित व संचालित करती हैं.

परंपरा निर्वहन का दूसरा पक्ष यह है कि आधुनिक समाज में परंपराओं की अपर्याप्तता साफ देखी जा सकती है. आधुनिक समाज अत्यंत जटिल हो चुका है, समाज में अनेकों संस्थाएँ सिर्फ अपने स्वार्थों की पूर्ति में लगी हैं. समाज में संघर्ष की संभावना बढ़ने से परंपराओं द्वारा इन पर नियंत्रण रखना असंभव सा लगने लगा है. आधुनिक जीवन में जल्दी-जल्दी परिवर्तन होने के कारण सामाजिक आवश्यकताएँ भी जल्दी-जल्दी बदल रही हैं. चूंकि कुछ परंपराएँ रूढ़िवादी होती हैं, अत: कई बार इनसे बदलती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती. कभी-कभी दूसरे समूह की अलग परंपराओं के कारण सामाजिक संगठन व एकता चरमराने लगती है, और समाज विघटन की ओर अग्रसर होने लगता है. आज परंपराओं का महत्व घटता जा रहा है और इसका स्थान कानून लेता जा रहा है. ऐसे में आवश्यकता है कि हम अपने रीति-रिवाजों और परंपराओं के पीछे वैज्ञानिक कारणों को जानें और उन्हें अपनाकर अपना समाज व देश बेहतर बनायें.

कृष्ण कुमार यादव,
क्षे.म.प्र.का., बेंगलूरु

भारतीय परंपराओं का विदेशों में अस्तित्व

श्री सुब्रमण्यम देवस्थान (मलेशिया)

भारत दक्षिण एशिया में स्थित भारतीय उपमहाद्वीप का सबसे बड़ा देश है. प्राचीन सिंधु घाटी सभ्यता व्यापार मार्गों और बड़े - बड़े साम्राज्यों का विकास स्थान रहे, भारत को इसके सांस्कृतिक और आर्थिक सफलता के लंबे इतिहास के लिए जाना जाता रहा है. भारत की सांस्कृतिक विरासत इसकी 5000 वर्ष पुरानी संस्कृति एवं सभ्यता है. भारत की पुरानी सभ्यता एवं सांस्कृतिक जीवन ने विश्व में अपनी गहरी पहचान छोड़ी है. भारतीय सभ्यता हमेशा से ही गतिशील रही है एवं इस सभ्यता की परंपराओं को दुनिया ने अपनाया एवं लाभ उठाया.

सभ्यताओं में सर्वप्रथम आध्यात्मिक सभ्यता का विदेशों में गहरा असर है. भारतीय आध्यात्मिक सभ्यता का असर इस प्रकार है कि, केवल भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में भी भारतीय मंदिरों का विशेष अस्तित्व है तथा भारतीय आध्यात्मिक सभ्यता को दूर- दूर तक फैला रहे हैं. विदेशों में स्थित कुछ भारतीय मंदिरों का उल्लेख इस प्रकार है.

▶ **श्री सुब्रमण्यम देवस्थान** मलेशिया का यह गुफा मंदिर कुआलालंपुर से 13 किलोमिटर दूर स्थित है. 1890 में लालकृष्ण पिल्लई ने इस मंदिर के बाहर भगवान मुरगन की एक विशाल प्रतिमा की स्थापना की थी. यह प्रतिमा विश्व में सबसे ऊंची भगवान मुरगन की प्रतिमा है.

अंगकोर वट कंबोडिया

▶ **अंगकोर वट कंबोडिया** 12 वीं सदी में बने इस मंदिर की गिनती दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक स्थलों के रूप में की जाती है. इसका निर्माण खमेर राजा सुरयावरमन ने कराया था. यह भगवान विष्णु का सबसे बड़ा मंदिर है. जो कि भारतीयों की आस्था का विदेशों में सबसे बड़ा आध्यात्मिक चिन्ह है.

श्री स्वामी नारायण मंदिर (ब्रिटेन)

▶ **श्री स्वामी नारायण मंदिर** यह ब्रिटेन का पहला मान्यता प्राप्त हिन्दू मंदिर है एवं भारतीय आध्यात्मिक सभ्यता का बड़ा प्रतीक है.

राधा माधव धाम अमेरिका, श्रीस्वामी नारायण मंदिर अमेरिका जैसे कुछ अन्य बड़े मंदिर विदेशों में स्थित हैं जो भारत की आध्यात्मिक सभ्यता का बड़ा प्रमाण है.

200 सदी से लेकर 15वीं सदी तक भारत के कई हिन्दू राजाओं का मलेशिया, इंडोनेशिया, कंबोडिया, बर्मा(अब म्यांमार) जैसे देशों पर सीधा प्रभाव रहा था. भारत की इस आध्यात्मिक सभ्यता का प्रभाव दुनिया पर पड़ा था जिसका असर विदेशों में मौजूद मंदिरों से सीधे लगाया जा सकता है.

अमेरिका और यूरोप में 19वीं और 20वीं सदी में हिन्दू संस्कृति और आध्यात्मिक परंपराओं का खूब प्रभाव पड़ा और वहाँ के लोग भी यहाँ की परंपराओं से इतने प्रभावित हुए कि, वह लोग भी यहाँ की परंपराओं से बड़े स्तर पर जुड़ रहे हैं, पश्चिमी देशों के बहुत से लोगों का भगवान कृष्ण के प्रति समर्पण अविस्मर्णीय है एवं उनके द्वारा भगवान कृष्ण के मंदिरों में किया जा रहा योगदान भारत की आध्यात्मिक परंपराओं का सबसे बड़ा उदाहरण है.

इस्कॉन (अंतर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ) इसे 1966 में न्यूयॉर्क शहर में भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभूपाद ने प्रारम्भ किया था. न्यूयॉर्क से प्रारम्भ हुई कृष्ण भक्ति की निर्मल धारा शीघ्र ही विश्व के कोने-कोने में बहने लगी. कई देश "हरे रामा हरे कृष्णा" के पावन भजन से गुंजायमान होने लगे. अपने साधारण नियम और सभी जाति-धर्म के प्रति समभाव के चलते इस मंदिर के अनुयाइयों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है. स्वामी प्रभूपादजी के अथक प्रयासों के कारण आज समूचे विश्व में 400 से अधिक मंदिरों की स्थापना हो चुकी है. आध्यात्मिक परंपराओं के साथ-साथ नैतिक परंपराओं का भी बहुत बड़ा स्थान है. बचपन से ही हमारी सभ्यता के अनुसार बड़ों का आशीर्वाद प्राप्त कर लेना परम सौभाग्य तथा विजय का सूचक माना गया है. यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि, अपने से बड़े बुजुर्ग, माता - पिता एवं गुरुजनों से आशीर्वाद मिलने से मनुष्य का मनोबल बढ़ता है.

किसी के प्रति सम्मान प्रकट करने या प्रणाम करने से मनुष्य छोटा नहीं हो जाता अपितु आशीर्वाद मिलने से अपार शक्ति का एहसास होता है. अनावश्यक अभिमान मनुष्य को नीचा बनाता है, इसका उदय न हो इसलिए बड़ों के समक्ष सदैव विनम्र होकर रहने की शिक्षा हमें दी गयी है. हमारी इस सभ्यता का फायदा हम सदियों से उठाते आ रहे हैं पर अब विदेशों में इस परंपरा का विशेष स्थान है हमारी तर्ज़ पर विदेश में भी

बड़ों के समान, अनेक अथक प्रयास किए जा रहे हैं, जो हमारी सभ्यता का एक और महत्वपूर्ण स्तम्भ है.

नैतिक एवं आध्यात्मिक परंपराओं के साथ -साथ भारत ने विश्व को एक वरदान भी दिया है, जो मन एवं शरीर के बीच सामंजस्य स्थापित करने में मानव की मदद करता है, जिसे हम योग कहते हैं. योग शब्द संस्कृत की यूज धातु से बना है जिसका अर्थ जुड़ना या एकजुट होना होता है. ऐसा माना जाता है कि जबसे सभ्यता शुरू हुई है, तभी से योग किया जा रहा है. योग के विज्ञान की उत्पत्ति हजारों साल पहले हुई थी.

कई वर्ष पहले हिमालय के कांति सरोवर झील के तटों पर आदि योगी ने अपने प्रबुद्ध ज्ञान को अपने प्रसिद्ध सप्तऋषि को प्रदान किया था. सप्तऋषियों ने योग के इस ताकतवर विज्ञान को एशिया, मध्यपूर्व उत्तरी अफ़्रीका एवं दक्षिण अमेरिका सहित विश्व के भिन्न - भिन्न भागों में पहुंचाया, इसी अवधि के दौरान मन को महत्व दिया गया तथा योग साधना के माध्यम से स्पष्ट बताया गया कि, समभाष का अनुभव करने के लिए मन एवं शरीर दोनों को नियंत्रित किया जा सकता है. 800 ईसवी -1700 ईसवी के बीच की अवधि को उत्कृष्ट अवधि के रूप माना जाता है. जिसमें शंकराचार्य, रामानुजाचार्य के उपदेश इस अवधि के दौरान प्रमुख थे. 1700 ईसवी -1900 ईसवी के बीच की अवधि को आधुनिक काल के रूप में माना जाता है. जिसमें महान योगाचार्य रमन महर्षि, रामकृष्ण परमहंस, परमहंस योगानन्द, विवेकानंद आदि ने योग के विकास में विशेष योगदान दिया. आमतौर पर योग को स्वास्थ्य एवं फ़िटनेस के लिए थेरेपी या व्यायाम की पद्धति के रूप में समझा जाता है. हालांकि शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य योग का स्वाभाविक परिणाम है, परंतु योग का लक्ष्य अधिक दूरगामी है. योग ब्रह्मांड से स्वयं की अनुभूति एवं सामंजस्य स्थापित करने की कला है.

आज भारत से उत्पन्न हुए, योग का फायदा सारा संसार उठा रहा है. इसका कितना महत्व है, उसका अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाया जाता है. योग से उत्पन्न शक्ति का फायदा भारत के लोग तो उठा ही रहे थे, अपितु भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी का सपना था योग का फायदा पूरा संसार उठाए इसीलिए उन्होंने 27 सितंबर, 2014 को संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने भाषण से इसका उल्लेख किया था, जिसमें उन्होंने कहा था कि "योग भारत की प्राचीन परंपरा का अमूल्य उपहार है". मनुष्य और प्रकृति के बीच का सामंजस्य है. विचार संयम और पूर्ति प्रदान करने वाला है.

जिसके बाद 21 जून को "अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस" घोषित किया गया. 11 सितंबर, 2014 को संयुक्त राष्ट्र में 177 सदस्यों द्वारा 21 जून को अंतराष्ट्रीय योग दिवस को मनाने के प्रस्ताव को मंजूरी मिली. प्रधानमंत्री श्री मोदी जी के इस प्रस्ताव को 90 दिन के अंदर पूर्ण बहुमत से पारित किया गया, जो संयुक्त राष्ट्र संघ में किसी प्रस्ताव के लिए सबसे कम समय था.

आध्यात्मिक, नैतिक एवं शारीरिक परंपराओं के साथ-साथ भारत ने विश्व को कलाओं में सर्वप्रथम भारतीय विविध नृत्य प्रदान किए हैं. भारतीय नृत्य भारत में ही नहीं अपितु विश्व के अन्य देशों में भी अपनी स्वर्णिम आस्था बिखेर रहा है. विदेशों में बसे भारतीयों के साथ-साथ वहाँ के मूल निवासी भी अपने बच्चों को भारतीय शास्त्रीय नृत्य की शिक्षा दिला रहे हैं.

लंदन की इंडियन डांस अकादमी की निदेशिका सुश्री मीरा कौशिक ने ब्रिटिश शासन की ओर से भारतीय नृत्य विद्या को एक जनजागृति की विशेष कला के रूप में विदेशों में फैलाया है. इंपीरियल सोसाइटी ऑफ टीचर्स ऑफ डांसिंग के सिलेबुरु में भी भरतनाट्यम और कथक को प्रमुख रूप से समाहित किया गया है.

भारतीय नृत्य, आज भारतीयों को ही नहीं अपितु विदेशों में रहने वाले लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर रहे हैं. मॉस्को की रशियन अकादमी ऑफ साइन्स एंड एंथ्रोपोलोजी में सीनियर रिसर्च फैलो डॉ स्वेतलाना आई रिझाकोवा भारतीय नृत्य की दीवानी है. उन्होंने इंडियन डांस आर्ट ट्रांसफॉरमेशन नाम की नृत्य कलाओं पर आधारित पुस्तक भी लिखी है, जो रूस में प्रकाशित भी हो चुकी है.

कोलम्बिया गायिका शकीरा अपने गीत और धुनों की वजह से पूरी दुनिया में मशहूर है. वह 2005 से भारतीय डांस फॉर्म्स को सीख रही थी, और 2006 में एमटीवी के समारोह के दौरान उनके नृत्य में भारतीय नृत्य साफ - साफ झलक रहा था. इसके एक और साल बाद वह भारत में पहली बार मुंबई शहर में आई और वहाँ के एम एम आर डी ए मैदान में लगभग 20 हज़ार लोगों की भीड़ इकट्ठा हुई थी, जहां उन्होंने भारतीय नृत्य भी पेश किया था. भारतीय नृत्य कला एवं अन्य परंपराओं का विदेशों में अस्तित्व एवं रुझान देखते हुए भारत सरकार ने भी इसके उत्थान के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए थे एवं सन 1950 से लगातार इसके उत्थान एवं प्रगति के लिए निरंतर प्रयासरत है.

सन 1950 में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (इंडियन काउंसिल फॉर कल्चरल रिलेशन्स- ICCR) की स्थापना की गयी थी. इस संस्था का मुख्यालय नई दिल्ली में है. इस संगठन के क्षेत्रीय कार्यालय बेंगलूरू, कलकत्ता, चंडीगढ़, चेन्नई, जकार्ता, मॉस्को, बर्लिन कैरो, लंदन, ताशकंद, जोहन्सबर्ग, डरबन, कोलंबो में है. इस संस्था का मुख्य उद्देश्य भारत की संस्कृति एवं परंपराओं का विदेशों में विकास एवं उत्थान है, जैसे कि विदेशों में प्रमुख सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेना, विदेशों में भारतीय महोत्सवों का आयोजन, अभिनय कलाकारों द्वारा विदेशों में व्याख्यान प्रस्तुतियां आयोजित करना, विश्व में भिन्न - भिन्न देशों में स्थित विश्वविद्यालयों में भारतीय अध्ययन पीठों की स्थापना और प्रचार - प्रसार करना. आज भारत की इन उपरोक्त परंपराओं से पूरा विश्व धन्य है एवं भारत की इन परंपराओं का सदा ऋणी रहेगा.

स्पर्श सक्सेना
क्षे. का., इंदौर

खान पान की विविधता

ठीक - ठीक तो याद नहीं कि बाहर का तापमान कितना था, लेकिन - 2 से तो कम ही रहा होगा. बड़े से मैदान में बजरी जैसी मिट्टी के ऊपर कई जगह आग जल रही थी, कैंप में आज 'बड़ा खाना' था जो कि कैंप फायर के उपलक्ष्य में रखा गया था. खाना अच्छा था लेकिन थोड़ा अलग था क्योंकि पारंपरिक उत्तर भारतीय खाने के व्यंजन पनीर, दाल, रोटी,चावल, दम आलू के साथ-साथ थुपका, मोकथुक, मक्खन वाली चाय आदि भी परोसी जा रही थी - नहीं समझे ? - हम लोग लद्दाख में थे साहब. आर्मी विंग से एन सी सी ट्रेनिंग के दौरान लद्दाख में सम्पन्न हुए स्पेशल कैंप के दौरान जब रसगुल्ला खाने को मिला तो उसका स्वाद भी सारे जहां से अलग था क्योंकि रसगुल्ला याक के दूध से बने छेने से तैयार किया गया था.

चलिये, यहीं से शुरू करते हैं सफर खाने-खिलाने का! हिंदुस्तान के मस्तक पर है लद्दाख! यहाँ के खाने में यहाँ की सभ्यता और मौसम की झलक आवश्यक रूप से दिखाई पड़ जाती है. जैसे यहाँ की देशी शराब 'छांग' जो लद्दाखी लोगों को खेतों में काम करने के दौरान ठंडे मौसम से बचाती है इसे पीने से ज्यादा नशा नहीं होता, बल्कि यह टॉनिक की तरह उनके शरीर को गर्म रखने में सहायक होती है. सर्दी से बचने के लिए नूडल्स, सब्जियों एवं मीट के साथ बनाया गया 'थुपका' बहुत ही चाव के साथ खाया जाता है. 'मोकथुक' एवं लद्दाख की पारंपरिक बेकरियों में बने ब्रैड, बिस्कुट और नान भी बहुत पसंद किए जाते हैं. लेकिन कश्मीर का खाना लद्दाख के खाने से थोड़ा अलग होता है, क्योंकि कश्मीर में पैदा होने वाला केसर, कश्मीरी मिर्च और अन्य मसाले इसे बनाते हैं. 'कश्मीरी नून चाय' जिसे केसर, दालचीनी और अन्य मसालों के साथ बनाया जाता है, शरीर को गर्म रखने में सहायक होती है. साथ ही 'दम आलू' और 'रोगन जोश' जिसे बहुत सारे तेल में बनाया जाता है और मीट के विभिन्न व्यंजन लाजवाब होते हैं. आमतौर पर 'कश्मीरी पुलाव' बासमती चावल, किशमिश, बादाम, काली मिर्च, अखरोट, केसर, आदि के मिश्रण से तैयार किया जाता है जो मीठापन लिए होता है.

उत्तर भारत का एक बड़ा ही सुंदर और शांत प्रदेश है - हिमाचल प्रदेश! हिमाचली लोग पहाड़ी सभ्यता के संगीत और संस्कृति के साथ खाने को हमेशा से जोड़े हुए हैं. यहाँ के जंगलों में पायी जाने वाली जड़ 'लुंगड़' की सब्जी और अचार कई बीमारियों से बचाते हैं. हिमाचल में जब कोई घरेलू उत्सव होता है तो आवश्यक रूप से दोपहर के खाने में 'धाम' का आमंत्रण दिया जाता है. 'हिमाचली धाम' एक तरह की दोपहर के खाने की दावत होती है, जिसमें सब लोग ज़मीन पर बैठ कर खाना खाते हैं. इसकी विशेषता यह है कि पत्तल के बीच में चावल का ढेर होता है और उस चावल पर बड़ी सुंदरता से सात प्रकार के व्यंजन जिनमें 3 प्रकार की दालें, मदिरा, सब्जी, मीठा भात, खट्टा भात, आदि शामिल होते हैं. इस धाम को तांबे के बर्तनों में, ब्राह्मण जाति से संबंध रखने वाले लोग ही बना सकते हैं. धाम खाने के बाद शाम को हिमाचली नृत्य का कार्यक्रम होता है. वैसे तो हिमाचल में भी पंजाबी खाने का असर होता है मगर पंजाब और हरियाणा में वहां पाये जाने वाले गेहूं, दूध, दही, आदि की भरमार होती है. यहाँ होने वाली मजबूत फसलों की तरह यहाँ का खाना भी भारी होता है. विभिन्न प्रकार के पराठे, सरसों का साग, मक्के की रोटी, लस्सी, छिहत, पनीर से बने व्यंजन, चिकन के व्यंजन, मटन के व्यंजन, दाल-मखनी, राजमा-चावल, कढ़ी-चावल, पूरी आदि पंजाबी व्यंजन अब सारी दुनिया में अपना डंका बजा रहे हैं. पंजाब के पास में ही राजस्थान और मारवाड़ क्षेत्र आता है, जिसकी दाल बाटी, चूरमा, बेसन के गट्टे की सब्जी, मावा कचौड़ी, राज-कचौड़ी, कुमटिया की सब्जी, गोंद के लड्डू, घेवर, आदि प्रसिद्ध व्यंजन हैं. जयपुर में घरों में बनने वाली मंगोड़ी और पिथौड़ी की सब्जी एवं गाय बहुल क्षेत्र मेवात, पटौदी एवं

अलवर का 'मिल्क-केक' विश्व प्रसिद्ध है.

उत्तर प्रदेश में मुख्यत: वही व्यंजन आपको हर जगह उपलब्ध रहेंगे जैसे कि अरहर की दाल, मसूर की दाल, चावल, रोटी, तमाम तरह की सब्जियाँ, मट्ठा, दही, रायता, इत्यादि. होली जैसे त्योहार पर गुझिया, तो दिवाली पर चने की दाल में कद्दू को पकाया जाता है और चावल के फरे बनाए जाते हैं, जिसके अंदर उड़द की दाल का नमकीन पेस्ट भरा होता है. शिवरात्रि जैसे त्योहार पर दूध की बनी ' ठंडाई ' का सेवन भी किया जाता है. गावों में आज भी पत्तल और कुल्हड़ का प्रयोग किया जाता है. अवधी व्यंजनों में मुगलई झलक मिलती है. इसमें लखनऊ की बिरयानी, गलावटी कबाब,जिन्हें हम टुंडे के कबाब भी कहते हैं, क्योंकि इनको बनाने वाले खानसामा टुंडे थे. कहा जाता है कि अवध के आखिरी नवाब, वाजिद अली शाह के पान खाने की आदत से परेशान होकर उनकी बेगम हज़रत महल ने अपने खानसामा को कुछ ऐसा व्यंजन ईज़ाद करने को कहा था जिससे नवाब की पान खाने की आदत छूट जाए, तो रसोइयों ने 'मलाई-गिलौरी' बनाई थी जो लखनऊ की प्रसिद्ध मिठाई है. अवध क्षेत्र के मलिहाबाद और काकोरी में पैदा होने वाले दशहरी आम विश्व प्रसिद्ध हैं.

पूर्वांचल एवं बिहार में चावल का अधिक प्रयोग किया जाता है. यहाँ की पारंपरिक डिश 'बाटी-चोखा' यहाँ की जमीन से जुड़ी संस्कृति की महक लिए होती है. मीठे में गुड़ मिश्रित पुवे बनाए जाते हैं जो कि हल्के से नमकीन भी होते हैं. इन्हें 'ठेकुआ' कहते हैं. चलिये, चलते हैं बंगाल की तरफ! यहाँ एक घर में दुर्गा-उत्सव की तैयारी चल रही है एवं उत्सव के दौरान खाए जाने वाले पारंपरिक व्यंजन तैयार किए जा रहे हैं. बंगाल में 'सूक्तो' नाम की एक डिश तैयार की जाती है, जिसमें थोड़ी सी चीनी के साथ कई सब्जियाँ मिलाई जाती हैं और एक कसैली सब्जी जैसे कि करेला मिलाया जाता है. फिश-करी एवं 'माछ-झोल' भी प्रसिद्ध हैं. बंगाल की प्रसिद्ध मिठाई रसगुल्ला या चमचम (छोटा रसगुल्ला) है, जो सारे भारत में खाने के बाद मीठे का सबसे ज्यादा प्रयोग किया जाने वाला व्यंजन है. 'संदेश' भी यहाँ की प्रसिद्ध मिठाई है. इसी प्रकार उत्तर पूर्व के खानों में, थुपका, मोमो, तुंगथप, आंरी, नूडल्स एवं चावल के बने व्यंजनों के साथ बिना दूध वाली चाय पसंद की जाती है.

उड़ीसा में होने वाले नारियल से 'चुंगड़ी मलाई' नाम की डिश बनाई जाती है. साथ ही घी की छौंक से तैयार खिचड़ी एवं चावल-पानी-खट्टे दही के मिश्रण से तैयार 'पखला भाटा' प्रत्येक घर का दैनिक भोजन है. 'मंचा-घात' नाम की डिश बनाई जाती है जो कि आलू-प्याज़, लहसुन और मसालों की ग्रेवी में तली गयी मछली को चावल के साथ परोसी जाती है. पखला भाटा के साथ हर वर्ष 20 मार्च को पखला दिवस के रूप में मनाया जाता है.

दक्षिण भारतीय व्यंजनों में जहां तमिल खाने में स्वाद, करी के पत्ते, मसूर की दाल, सरसों के बीज, दालचीनी, काली मिर्च, इलायची, जीरा, नारियल, गुलाब आदि के प्रयोग से पोली, इडली, रसम, सांभर, डोसा और पोंगल आदि डिश तैयार की जाती है. केले के पत्ते पर चावल दही, सांभर, मोर व तक्र परोसा जाता है एवं खाने वाले चावल में सब कुछ सानकर बड़े चाव से खाया जाता है. आपके सामने ही पाल (दूध) में वल्लम (पानी) मिलाते हैं और कहते हैं कि हम शुद्ध दूध नहीं बेचते, हम काफी का दूध रखते हैं. मलयाली खाने में प्रसिद्ध व्यंजन है 'पायसम', 'सादया', 'चोर' (चावल), 'चिकन स्टू', 'इडियापम', 'अवीयल', 'पुट्टु', अप्पम् एवं तमाम तरह की मछली करी! कर्नाटक के व्यंजनों में काई-चटनी, नूपुट्टू, कोसमबारी, पनादी करी एवं उडुप्पी है. बेसन, घी, मेवे एवं चाशनी से बनाया जाने वाला मैसूर-पाक प्रसिद्ध है. हैदराबाद की बिरयानी को नहीं भूला जा सकता है. आंध्र में मसालों का प्रयोग ज्यादा किया जाता है. इनमें रायलसीमा के व्यंजन, तेलंगाना के व्यंजन, जिनमें पेरुगु पूरी, बादाम-हलवा, पचाही-पुरू, आदि प्रसिद्ध हैं. इन्हें दाल, टमाटर तथा इडली की सहायता से बनाया जाता है. इस प्रकार दक्षिण में मुख्यत: इडली, सांभर, बड़ा, डोसा, चटनी, नारियल की बर्फी एवं नारियल से बनाए जाने वाले अन्य व्यंजन प्रसिद्ध हैं.

मराठी खाने का नाम आते ही सबसे पहले 'पूरन-पोली' का जिक्र किया जाता है. इसके साथ ही वड़ा-पाव, श्रीखंड, भेलपूरी, झुणका-भाखर आदि भी प्रसिद्ध हैं. पूरन पोली को चने की दाल, गुड़ एवं गेहूं के आटे के साथ बनाया जाता है. नारियल पानी तथा आंबट-वरन भी आपको हर जगह मिल ही जाएंगे. गणेश पूजा में बनने वाले मोदक तो अब विश्व प्रसिद्ध हो चुके हैं. कोंकण क्षेत्र के मूंगा-डलितों, टेंडली-भाजी, गोज्जु, आदि प्रसिद्ध हैं.

गुजरात के व्यंजनों की एक बात इनको सबसे अलग करती है, इनमें एक साथ मीठे, नमकीन और खट्टे का स्वाद एक ही व्यंजन में मिल जाएगा! ढोकला इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है. खांडवी, लापसी, थेपला, भाखरी, खमण, फाफड़ा, गोटा, इनके बारे में कौन नहीं जानता?

कितना लिखे, कितना कहें, कितनी चर्चा करें ? भारतवर्ष में खाने के इतने व्यंजन और तौर-तरीके हैं कि लिखते - लिखते पन्ने पर पन्ने भरते चले जाएंगे और हर व्यंजन की उत्पत्ति के पीछे एक कहानी! बचपन से एक बात सुनते आए थे कि 'कोस कोस पर बदले पानी - चार कोस पर बानी', सच में ऐसा ही है हमारा भारतवर्ष. जहां एक तरफ हरियाणा के ताऊ, खाने के बाद चारपाई पर हुक्का गुड़गुड़ा रहे होते हैं तो उसी समय केरल में खाने के बाद जलजीरा वाला पानी पिया जा रहा होता है. कई तरह की संस्कृतियाँ, कई तरह के लोग, कई तरह की फसलें, कई तरह की आवश्यकताएँ और उन आवश्यकताओं से निकले तमाम तरह के व्यंजन! हर व्यंजन एक अलग कहानी कहता है और इन अलग-अलग कहानियों को मिलाकर बनी एक सभ्यता, भारतवर्ष की सभ्यता!

राजीव यादव
क्षे.का., लखनऊ

भारतीय संस्कृति एवं परंपरा के लोक नृत्य

भारत का नाम आते ही सामने आ जाता है विविधताओं से भरा देश. जिस धरती पर विभिन्न संस्कृति एवं परंपराओं का मेल होता है वही भारत है. भारत की संस्कृति जितनी रोचक है, उतनी दुनिया के किसी देश की नहीं है. यहाँ की संस्कृति दुनिया की तमाम संस्कृतियों में सबसे ज्यादा उन्नत है. विविधताओं से भरे देश का हर रंग निराला है. इस देश की हर प्रांत की अपनी विशेषता है. अपनी संस्कृति है, जो उस प्रांत की लोक कथाओं में नजर आती है. सभी प्रांतों के अपने लोक संगीत व लोक नृत्य होते हैं. इसमें वहां की परंपराओं और समुदायों की भावनाओं की अभिव्यक्ति देखने को मिलती है. यहाँ की संस्कृति, यहाँ के सभी धर्म, खान-पान, रहन-सहन, लेकिन जो सबसे ज्यादा अलग है, वो है भारत में मनाए जाने वाले त्योहार, उत्सव या पर्व और इन उत्सवों, त्योहारों पर किए जाने वाले लोक नृत्य जो भारत की संस्कृति को और अधिक रोचक बनाती है.

लोकनृत्य उन नृत्यों को कहते हैं जिनकी शुरुआत प्रायः उन्नीसवीं शताब्दी या उसके पहले की हैं. इन नृत्यों का ढंग पारंपरिक होता है. इसके नृत्यकार सामान्यतः आम आदमी ही होते हैं तथा इन्हें किसी संस्था द्वारा संचालित नहीं किया जाता है. लोक नृतक स्वयं ही गाते हैं और उनके साथ वाद्य यंत्र बजाने वाले प्रशिक्षित होते हैं. प्रत्येक लोक नृत्य की पोशाक अलग होती है. यह पोशाकें बहुत रंग बिरंगी होती हैं और इनके साथ मेल खाते हुए परंपरागत गहने पहने जाते हैं.

इन लोक नृत्यों में ग्रामीण भारत की माटी की महक आती है और इसी महक से इन नृत्यों की सुंदरता और बढ़ जाती है. कोई भी त्योहार हो या खुशी का मौका जैसे विवाह, जन्म इत्यादि इन नृत्यों के बिना संपूर्ण नहीं होता. चाहे वह बंगाल का छाउ नृत्य हो या पंजाब का भांगड़ा अथवा असम का बिहू या आंध्र प्रदेश का गोनी. इन सभी में एक विशेष संस्कृति की परंपराओं की झलक दिखती है. यह लोक नृत्य देखने में जितना आसान लगता है करने में उतना ही कठिन होता है. यह नृत्य पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रहती हैं. इसके लिए लोक कलाकारों में जोश और शक्ति भरा होना चाहिए. कुछ लोक नृत्य केवल स्त्रियाँ करती हैं तो कुछ केवल पुरूष. कुछ दोनों मिलकर करते हैं. जैसे बंगाल का छाउ नृत्य केवल पुरूष करते हैं, राजस्थान का घूमर केवल महिलाएं करती हैं, असम का बिहू दोनों मिलकर करते हैं. ज्यादातर मौकों पर लोक नृत्य की प्रस्तुति समूहों में होती है. भारत में अनेक प्रकार के लोक नृत्य हैं. तो आइये, जानते हैं इनमें से कुछ प्रसिद्ध लोक नृत्य के बारे में

भांगड़ा - यह नृत्य शैली पंजाब की है और इसे केवल पुरूष ही करते हैं. सन 1880 के दशक के दौरान पंजाब के उत्तरी क्षेत्र में एक सामुदायिक नृत्य होता था जिसे भांगड़ा नृत्य कहा जाता है. भांगड़ा एक मौसम आधारित नृत्य है जो अप्रैल के महीने में शुरू होकर बैसाखी तक चलता है. इस महीने में फसलें विशेषकर गेहूं की बुआई होती है. बैसाखी के दौरान स्थानीय मेला भी लगता है और इन दिनों नये फसल तथा बैसाखी के त्योहार के उपलक्ष्य में कई दिनों तक पुरूष इस नृत्य को करते हैं. 1947 में पंजाब क्षेत्र के विभाजन के बाद बैसाखी मेलों की परंपरा टूट गई और जिन क्षेत्रों में सामुदायिक नृत्य भांगड़ा होता था उनमें से ज्यादातर पाकिस्तान में चले गए. परंतु भारत के पंजाब प्रांत के पंजाबियों ने इस नृत्य को जीवित रखा. अब भांगड़ा केवल बैसाखी के मेले तक सीमित नहीं रहा. इसे पूरे साल किसी भी खुशी के अवसर पर देखा जा सकता है. आजकल पुरूषों के साथ स्त्रियाँ भी यह नृत्य करती हैं. पंजाबियों के खुशी की अभिव्यक्ति का एक रूप है भांगड़ा नृत्य.

बिहू - यह लोक नृत्य असम प्रांत का है और इसे बिहू के त्योहार के साथ जोड़ा जाता है. इस नृत्य को स्त्री और पुरूष मिलकर रंग बिरंगे असमिया पोशाक पहनकर करते हैं. बिहू, आसामी नए साल को कहते हैं जो मध्य अप्रैल में पड़ता है. यूं तो यह नृत्य असम में कब से हो रहा है यह कहना मुश्किल है. परंतु 1694 में इस नृत्य का आधिकारिक जिक्र मिलता है जब अहोम राजा रूद्र सिंह ने पहली बार बिहू नृत्य करने वालों को रांघर के मैदानों में रोंगाली बिहू के अवसर पर नृत्य करने के लिए बुलाया था.

छऊ - यह एक लोक नृत्य है जो बंगाल, ओडिशा एवं झारखंड मे प्रचलित है. इसके तीन प्रकार हैं-सेरैकेल्लै छऊ, मयूरभंज छऊ और पुरुलिया छऊ. कुछ विद्वानों का मानना है कि "छऊ" शब्द संस्कृत शब्द "छाया" से लिया गया है जिसका अर्थ छाया या छवि है. सीताकांत महापात्र मानते हैं कि छऊ शब्द 'छावनी' से लिया गया है जिसका अर्थ

'सैन्य शिविर' है.

चांगू - यह लोक नृत्य ओडिशा का आदिवासी नृत्य है. चांगू ओडिशा में बहुत लोकप्रिय है. भुरइंया ,बाथुडी, खारिया, जूयांग, मेची एवं सुंदरगढ़ के कोंधा समुदाय, क्योंझर, मयूरभंज तथा कंधामल जिले के स्त्री पुरूष मिलकर इस नृत्य को करते हैं. स्त्रियाँ ज्यादातर लाल किनारे की सफेद साड़ी पहनती हैं और पुरूष वहां का रंग बिरंगा पारंपरिक पोशाक. यह नृत्य खुले आसमान के नीचे चांद की रोशनी में किया जाता है. इस नृत्य से यहां के लोगों के सीधी साधी जीवन शैली की झलक मिलती है.

गरबा - यह गुजरात प्रांत का लोक नृत्य है. इसका नाम संस्कृत के शब्द गर्भ और दीप से आई है. गरबा को नवरात्र के साथ जोड़ा जाता है. बीच में एक मिटटी के कंदील में दीया जलाकर या देवी शक्ति की चित्र अथवा मूर्ति के चारों ओर पारंपरिक गरबा की जाती है. गरबा की कुछ मुद्राएं सूफी संस्कृति से मिलती जुलती हैं. परंपरा के अनुसार गरबा नवरात्र के नौ दिनों तक किया जाता है. गरबा नृत्य करने वालों की पारंपरिक पोशाक लाल, गुलाबी, पीला, नारंगी इत्यादि चमकीले रंगों की होती है. चमकीले रंगों की चन्या चोली या घाघरा चोली, बांधनी अथवा अबला या गुजराती बार्डर की ओढ़नी गरबा की पारंपरिक पोशाक है. इसके साथ भारी गहने जैसे 2 - 3 हार, मोटे-मोटे कड़े, करधनी, पायल, कान की लंबे-लंबे झुमके इत्यादि पारंपरिक गहने पहनते हैं.

हम कह सकते हैं कि आधुनिक गरबा में गरबा और डांडिया रास का मिश्रण हो गया है. पारंपरिक रूप में डांडिया रास केवल पुरूष करते थे. नृत्य के इस पारंपरिक रूप को आजकल पारंपरिक और रंग बिरंगी पोशाक तथा गहने पहनकर स्त्री और पुरूष मिलकर करते हैं. आज गरबा गुजरात की सीमा पार करके पूरे भारत के साथ-साथ विदेशों में भी फैल गया है.

घूमर - यह राजस्थान प्रांत का लोक नृत्य है. घूमर का विकास भील कबीले के लोगों द्वारा किया गया. उसके पश्चात राजस्थान के अन्य समुदायों ने इसे अपनाया. यह नाच ज़्यादातर महिलाओं द्वारा घूँघट लगाकर और एक घुमेरदार पोशाक, जिसे 'घाघरा' कहा जाता है, पहनकर गोल-गोल घूमती हैं और महिलाएं तथा पुरूष एक साथ गाते हैं.

इस लोक नृत्य को अपना नाम घूमना से मिला है. घूमना अर्थात राजस्थानी महिलाओं के साथ-साथ उनके द्वारा पहनी गई रंग बिरंगी घाघराओं का भी हवा में घूमना. नृत्य करने वाली इन महिलाओं का चेहरा दुपट्टे से ढ़ंका होता है और उनका घाघरा हवा में लहराता है, उनके कदम नपे होते हैं, शरीर का लचीलापन, बीच बीच में ताली बजाना कुल मिलाकर दृश्य देखने लायक होता है. ज्यादातर इस नृत्य के दौरान देवी सरस्वती की पूजा होती है.

लावणी - लावणी महाराष्ट्र राज्य की लोक नाट्य-शैली तमाशा का अभिन्न अंग है. आज इसे महाराष्ट्र के सबसे लोकप्रिय और प्रसिद्ध लोक नृत्य शैली के रूप में जाना जाता है. लावणी नृत्य की विषय-वस्तु कहीं से भी ली जा सकती है, लेकिन वीरता, प्रेम, भक्ति और दु:ख जैसी भावनाओं को प्रदर्शित करने के लिए यह शैली उपयुक्त है. संगीत, कविता, नृत्य और नाट्य सभी मिलकर लावणी बनाते हैं. इनका सम्मिश्रण

इतना बारीक होता है कि इनको अलग कर पाना लगभग असम्भव है. महाराष्ट्र में विभिन्न प्रकार के लोक नृत्य किए जाते हैं, किंतु इन नृत्यों में लावणी नृत्य सबसे ज़्यादा प्रसिद्ध लोक नृत्य है. लावणी शब्द 'लावण्य' से बना है, जिसका अर्थ होता है- 'सुन्दरता'. लावणी नृत्य इतना अधिक प्रसिद्ध है कि हिन्दी फ़िल्मों में अनेकों गाने इस पर फ़िल्माये गए हैं. रंग-बिरंगी भड़कीली साड़ियों और सोने के गहनों से सजी, ढोलक की थापों पर थिरकती लावणी नृत्यांगनाएँ इस नृत्य कला के नाम को सार्थक करती हुए दर्शकों का मनोरंजन करती हैं. लगभग नौ मीटर लम्बी पारम्परिक साड़ी पहनकर और पैरों में घुँघरू बांध कर सोलह श्रृंगार करके जब ये नृत्यांगनाएँ नृत्य करती हैं तो दर्शक मदहोश हुए बिना नहीं रह पाते.

इन लोक नृत्यों ने कलात्मक नृत्य का दर्जा प्राप्त कर लिया है. प्रत्येक उत्सव या सार्वजनिक आयोजन में इन नृत्यों का दिखाई देना सामान्य बात है. यदि प्रत्येक राज्य के लोक नृत्य को एक जगह देखना है तो प्रतिवर्ष 26 जनवरी, भारतीय गणतंत्र दिवस, एक ऐसा महत्त्वपूर्ण अवसर है, जब नेशनल स्टेडियम के विशाल क्षेत्र और परेड के 8 किलोमीटर लम्बे मार्ग पर नृत्य करने के लिए देश के सभी भागों से नर्तक दिल्ली आते हैं. इस अवसर पर इनकी झाँकियाँ भी निकलती हैं. इन लोक नृत्यों को देखने के लिए देश से ही नहीं अपितु विदेशों से भी लोगों का जमघट लगता है.

यह तो एक झलक भर है. भारत के सभी प्रांतों में लोक नृत्यों का चलन है. एक प्रांत में कई तरह के लोक नृत्य होते हैं. ये लोग माटी से जुड़े होते हैं लेकिन इन्हें ग्रामीणों का नृत्य नहीं समझना चाहिए. भारत के ये लोक नृत्य विदेशों में भी नाम कमा रहे हैं. परंतु कहीं न कहीं भारत में इनकी जड़ें कमजोर होती जा रही हैं. जिस प्रांत का लोक नृत्य है उस प्रांत के बाहर इसकी पहचान नहीं होती है. हां, इसका एक अपवाद है भांगड़ा और गरबा. हम भारतीयों को ही इन लोक नृत्यों को भारत में जीवित रखना पड़ेगा ताकि लोक नृत्य भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बना रहे.

अमित महतो

केंद्रीय कार्यालय; मुंबई

भारतीय परंपराओं के परिप्रेक्ष्य में संयुक्त परिवार बनाम एकल परिवार

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और परिवार समाज की सबसे छोटी इकाई. एक झुंड से जुड़े हुये व्यक्तियों को एक साथ रहना ही समाज कहलाता है. भारतीय समाज का एक पौराणिक विरासत है, जिसे हम अपनी संस्कृति के रूप में देखते हैं एवं युग युगांतर तक इसे सँजोए रखना चाहते हैं.

सामान्यत: परिवार दो प्रकार के होते हैं, पहला संयुक्त परिवार एवं दूसरा एकल परिवार. संयुक्त परिवार भारतीय संस्कृति की पहचान है जबकि एकल परिवार पाश्चात्य संस्कृति का. जहां तक परिभाषित करने का प्रश्न है, संयुक्त परिवार एकल परिवारों का समूह है जिसमें एक साथ कई पीढ़ियों के लोग एक साथ रहते हैं एवं एकल परिवार में सामान्यत: पति-पत्नी के अलावा अविवाहित बच्चे रहते हैं.

जब हम संयुक्त परिवार एवं एकल परिवार की तुलनात्मक विवेचना करते हैं तो पाते हैं कि भारत एक महान संस्कृति का देश रहा है और इसका इतिहास सदियों पुराना है. इतनी पुरानी सभ्यता एवं संस्कृति को आज भी जिंदा रखने का एकमात्र कारण है संयुक्त परिवार जहां दादा - दादी अपने पोते-पोतियों को भारतीय संस्कृति का महत्व समझाते हैं एवं उसे अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं. इस तरह पीढ़ी दर पीढ़ी यह सभ्यता और संस्कृति और मजबूत होती जाती है.

आइये, हम इन दोनों ही परिवार के स्वरूपों के लाभ एवं हानि की चर्चा करते हैं.

अगर भारत के संयुक्त परिवार के महत्व को समझना है तो हमें रामायण में उल्लिखित राजा दशरथ के परिवार को पढ़ना एवं समझना होगा जो कि इसका सबसे प्रखर उदाहरण है. संयुक्त परिवार में घर के सबसे बड़े पुरुष ही घर के मुखिया होते हैं एवं घर से जुड़े सारे मुद्दे पर उनका फैसला ही मान्य होता है. रिश्तों की अहमियत ही संयुक्त परिवार का मूल है. पिता की आज्ञा का पालन करना प्रत्येक पुत्र का धर्म है और उसी परंपरा को अपनाते हुए राजा दशरथ ने जब भगवान राम को चौदह वर्ष का वनवास सुनाया तो भगवान राम ने इसे अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य समझकर सहर्ष अपनाया. उसी रिश्ते की अहमियत में सीता ने अपने पत्नीधर्म का पालन करते हुए कठोर वनवास जीवन में राम के साथ रहने का प्रण लिया तो छोटे भाई लक्ष्मण ने अपने पिता तुल्य बड़े भाई एवं माँ समान भाभी सीता की रक्षा के लिए साथ जाने की जिद्द किया. संस्कृति की चरमोत्कर्ष अभी भी बाकी रही क्योंकि राजधर्म का पालन करते हुए भाई भरत का भ्राता विलाप अभी भी बाकी है जिनको लाख मनाने के बाद भी वह उस राजसिंहासन पर बैठने को राजी नहीं हुआ जिस पर सिर्फ और सिर्फ बड़े पुत्र का हक होता है. एक संयुक्त परिवार दो एकल परिवार में विभाजित हो चुका था लेकिन भरत का प्रण और भैया राम का वचन था कि चौदह वर्ष समाप्त होते ही वो अयोध्या लौटेंगे और राजसिंहासन पर आसीन होंगे और अगर उससे एक दिन भी विलंब हुआ तो वो अपना प्राण त्याग देंगे. स्पष्ट है कि शारीरिक रूप से एक संयुक्त परिवार विभाजित हो गया था लेकिन भारतीय संस्कृति की यह अटूट बंधन के कारण भावनात्मक रूप से यह परिवार संयुक्त रहा और चौदह वर्षों तक चलता रहा.

आज के बदलते परिवेश में हम इसी परंपरा को भूलते जा रहे हैं. रोजगार की तलाश में संयुक्त परिवार से टहनी टूटती जा रही है और अलग-अलग एकल परिवार बनता जा रहा है.

संयुक्त परिवार के फायदे

★ संयुक्त परिवार में बच्चों का पालन पोषण तनावमुक्त मौहल में होता है जहां उन्हें सिर्फ अधिकार होता है न कि किसी प्रकार की जिम्मेदारी. इस मौहल में बच्चों का मानसिक विकास सम्पूर्ण तरीके से होता है इसका मुख्य कारण है कि संयुक्त परिवार में छोटी-बड़ी समस्याओं का निपटारा घर के बड़े सदस्यगण कर लेते हैं और बच्चों को उन चीजों के लिए संघर्ष नहीं करना पड़ता हैं. बच्चे अपने आप को सदैव सुरक्षित महसूस करते हैं.

- ★ बच्चों के अंदर परिवार एवं समाज के प्रति भावनात्मक जुड़ाव जन्म लेता है जो उन्हें एक अच्छा नागरिक बनने में मदद करता है एवं इससे एक स्वस्थ समाज एवं सशक्त राष्ट्र का निर्माण होता है. उनमें भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के प्रति जागरूकता पनपती है जो इसे और आगे ले जाने में मदद करती है.
- ★ संयुक्त परिवार में बच्चे अपने भावनाओं एवं समस्याओं को एक दूसरे के साथ साझा कर सकते हैं एवं उसका समाधान ढूँढ़ना आसान होता है जिससे बच्चे तनाव में जीने को मजबूर नहीं होते हैं.
- ★ अक्सर ऐसा देखा जाता है कि अकारण मृत्यु के कारण महिलाएं विधवा हो जाती हैं या बच्चे अनाथ हो जाते हैं. भारतीय परंपरा में संयुक्त परिवार में उनका भरण-पोषण बिना किसी खास परेशानी के हो जाता है और उन्हें किसी प्रकार की आर्थिक एवं पारिवारिक संकट से जूझना नहीं पड़ता है.

संयुक्त परिवार के नुकसान

ऐसा नहीं है कि संयुक्त परिवार की खामियाँ नहीं हैं. यहाँ हम इसकी कुछ ऐसी खामियों एवं उनके विपरीत प्रभाव की चर्चा करते हैं.

- ★ संयुक्त परिवार में पलकर अक्सर बच्चा अपना पहचान नहीं बना पाता है क्योंकि बच्चों के निर्णय लेने की क्षमता का विकास उतना तार्किक नहीं हो पाता है क्योंकि उन्हें निर्णय लेने का मौका नहीं मिलता है. घर में हरेक मुद्दे पर घर के मुखिया का निर्णय ही मान्य होता है. ऐसी परिस्थिति में बच्चों के अंदर आत्मविश्वास का अभाव रह जाता है. साथ ही पारिवारिक कानून - कायदे में बंधकर बच्चों में चिड़चिड़ापन जैसे गलत लक्षण पनपने लगते हैं.
- ★ इस तरह के माहौल में पलने-बढ़ने से बच्चों के क्रियाकलापों, उनकी रुचि को समझने हेतु विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है ताकि बच्चों के अंदर छिपी विशेष प्रतिभा को निखारा जा सके. अक्सर यह देखा जाता है कि परिवार के सारे बच्चों को एक तरह की शिक्षा-दीक्षा मुहैया कराई जाती है न कि उनकी रुचि या प्रतिभा के अनुसार.

एकल परिवार के फायदे

- ★ जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है एकल परिवार में बच्चों का मानसिक विकास बहुत ही लक्षित तरीके से होता है क्योंकि परिवार में मुख्यत: एक से दो बच्चे ही होते हैं और माता-पिता उनसे लगातार संपर्क में रहकर उनकी रुचि एवं विशेष प्रतिभा को समझ सकते हैं एवं उसी के अनुसार उनकी पढ़ाई-लिखाई कराई जाती है.
- ★ बच्चों में निर्णय लेने की आज़ादी होती है क्योंकि छोटे परिवार में उनके निर्णय को तवज्जो दिया जाता है जिसके परिणामस्वरूप उनका आत्मविश्वास बढ़ता है.
- ★ बच्चों की जरूरतों को ज्यादा करीब से देखा एवं समझा जाता है एवं उसे पूरा करने की कोशिश की जाती है, जिससे उसके जीवन में उत्साह मिलता है एवं उसे अपने जीवन शैली को अपने अनुसार जीने की आदत पनपती है.

एकल परिवार के नुकसान

- ★ एकल परिवार का तेजी से पनपने का ही परिणाम है कि आज पाश्चात्य संस्कृति हमारे देश में अपनी जड़ें जमाने लगी है. वृद्धाश्रम एवं बेबी सिटिंग जैसी संस्थाएं अपने पैर काफी तेजी से पसारने लगी हैं. जिस परिवार में पति पत्नी दोनों ही कार्य करने के लिए घर से बाहर जाते हैं, उसके बच्चे का देखभाल आया करती है एवं उस घर के बुजुर्ग माता-पिता का जीवन वृद्धाश्रम में गुजरता है.
- ★ ऐसे परिवार में बच्चे अक्सर अपने बुजुर्ग दादा - दादी के प्यार से वंचित रह जाते हैं. अपनी परंपरा एवं संस्कृति की शिक्षा उन्हें नहीं मिल पाती है जिससे उनमें अपने देश एवं समाज के सांस्कृतिक मूल्यों का अभाव रह जाता है.
- ★ बच्चे अक्सर अकेलापन महसूस करते हैं जिसका परिणाम है कि वे समाज के लोगों से घुल मिल नहीं पाते हैं, इतना ही नहीं उनके अंदर समाजिकता नहीं पनप पाती है. बच्चे अधिकांशत: अपने निर्णय खुद लेते हैं जिसमें होने वाली गलतियों के कारण कभी-कभी वे तनावपूर्ण जीवन जीने लगते हैं. आज अक्सर सुनने को मिलता है कि सामान्यत: वृद्धावस्था में होने वाली बीमारियाँ कम उम्र के बच्चों में भी पनपने लगी हैं.
- ★ सबसे बड़ा जोखिम घर के मुखिया की मृत्यु होने की स्थिति में होता है. परिवार पूर्णत: सामाजिक एवं आर्थिक रूप से बिखर जाता है. सिर्फ मृत्यु ही नहीं बल्कि गंभीर बीमारी के मामले में भी एकल परिवार पूरी तरह से बिखर जाता है. आर्थिक स्थिति खराब होने लगती है एवं पूरे परिवार में तनाव का माहौल पैदा हो जाता है. विधवा महिला एवं अनाथ बच्चों को काफी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है.

इन सारी बातों के मूल में जाने पर एक बात स्पष्ट है कि एक तरफ संयुक्त परिवार जो हमारे देश की सांस्कृतिक विरासत की पहचान है तो दूसरी तरफ एकल परिवार देश एवं समाज में तेजी से पैर पसार रहे भौतिक विकास का परिचायक है. एकल परिवार के बढ़ते प्रचलन ने समाज में धीरे-धीरे पर्व-त्योहार मनाने के तौर-तरीके को भी बुरी तरह प्रभावित किया है. इसके साथ ही साथ एक तो बच्चों को अपने परिवार के प्यार से वंचित रहकर आया के देखरेख में पालन-पोषण के लिए मजबूर होना पड़ता है तो दूसरी तरफ बुजुर्ग माता-पिता को अपने बच्चों का सहारा छिनता जा रहा है.

व्यक्तिगत रूप से अगर एकल परिवार को शहरीकरण की मजबूरियों के देखने के बजाय इसके इतर अन्य किसी भी मापदण्ड पर इन परिवारों की तुलना की जाय तो संयुक्त परिवार ही सर्वश्रेष्ठ स्वरूप है.

संजीव कुमार
सरल प्रमुख, रांची

वायनाड अभयारण्य

केरला का वायनाड वन्य जीव अभयारण्य अपने आप में अनूठा है. यह अभयारण्य केरल का दूसरा बड़ा अभयारण्य है. यह 'मुथंगा वन्य जीव अभयारण्य' नाम से भी जाना जाता है. 345 किलोमीटर का यह अभयारण्य सुल्तान बाथेरी, मुथंगा, कुरिचियाट और थोलपेट्टी इन चार पर्वत श्रृंखलाओं में स्थित है. वर्ष 1973 में स्थापित इस अभयारण्य में वन्य हाथियों के लिए विशेष सुरक्षा व्यवस्था प्रदान की जाती है. अपनी हरियाली और घने जंगलों को लेकर यह वन पूरे साल हरा भरा रहता है

टीक, यूकैलिप्टस और ओक के बड़े-बड़े वृक्ष इस वन की खासियत है. यहां वनौषधियाँ और जड़ी बूटियां भी पाई जाती है. शेर, चीता, जंगली बिल्ली, लंगूर, जंगली कुत्ते, हाथी आदि विभिन्न प्रकार के वन्य जीवों से तथा विभिन्न पंछियों से यह अभयारण्य हरदम लहलहाता रहता है. इस अभयारण्य में सैर करना और इसकी विभिन्न छटाओं को समेटना अद्भुत आनंद देता है.

साबरी नाथ जे.
क्षे. का. तिरुवनंतपुरम

वैदिक परंपराएँ एवं वैज्ञानिकता

हिन्दू धर्म को इस संसार का सबसे प्राचीन और वैज्ञानिक धर्म माना जाता है और सिर्फ माना ही नहीं जाता बल्कि इसके प्राचीनतम होने के अनेक प्रमाण भी उपलब्ध हैं.

हिन्दू धर्म की वैदिक परंपराएं

इतिहास इस बात का साक्षी है कि हिंदू धर्म विश्व का सबसे प्राचीनतम धर्म है. संसार के 20 बड़े देशों में हिंदू धर्म की जड़ें फैली हुई हैं.

हिंदू धर्म के इतिहास पर दृष्टि डालें तो सर्वसम्मति से और विभिन्न साक्ष्यों और प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि हिंदू धर्म का आरंभ सिंधु घाटी की सभ्यता से जुड़ा हुआ है. सिंधु घाटी की सभ्यता में मिली पशुपति नाथ की मूर्ति, जर्मनी में 1939 में मिली नरसिंह की मूर्ति इस बात के ठोस प्रमाण हैं. कुछ इतिहासकारों का मानना है कि हिंदू धर्म का जन्म वेदों से ही हुआ है इसलिए इसे वैदिक धर्म भी कहा जाता है. वेदों की संरचना के साथ ही मंत्रों का जन्म हुआ और हिंदू धर्म के दार्शनिक और वैज्ञानिक पक्ष का विकास हुआ. इसी समय योग, सांख्यिकी, वेदांत और उसके बाद पुराणों की रचना हुई जिनमें धर्म, ज्ञान, विज्ञान और इतिहास का वर्णन मिलता है.

हिंदू धर्म और विज्ञान

हिंदू धर्म, विज्ञान आधारित धर्म कहा जाता है. प्राचीन काल में शिक्षा का प्रचार प्रसार न होने के कारण हिंदू धर्म में ज्ञान विज्ञान की शिक्षा धर्म से जोड़कर, परंपराओं और मान्यताओं में बांधने का प्रयास किया गया. कहते हैं जो वैज्ञानिक नियमों के अनुसार अपना विकास करता है वही शाश्वत होता है, इसी कारण हिंदू धर्म को सनातन धर्म भी कहा जाता है. इस धर्म की नींव भी वैज्ञानिकता पर ही आधारित है. इसका प्रमाण सबसे पहले मिलता है प्राचीन काल के कार्यानुसार किए गए वर्ण विभाजन से, जहां व्यक्ति के कार्य के अनुसार उसके वर्ण को विभाजित किया गया था. सभी वर्णों में आपसी प्रेम और समन्वय था. इसके अलावा हमारे पूर्वजों ने अनेक धार्मिक परंपराएं और मान्यताएं निर्धारित की हैं. जब उन्हें वैज्ञानिक कसौटी पर कसा जाता है तो वह खरी उतरती हैं. इससे यह पता चलता है कि हिंदू धर्म पूरी तरह से वैज्ञानिक है. आइये देखें, किस तरह हर परंपरा और मान्यता विज्ञान की कसौटी पर खरी उतरती है.

तुलसी पूजन

तुलसी पूजन हर भारतीय घर की पहचान है. गृहिणी द्वारा सुबह सवेरे तुलसी में पानी देने की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है. तुलसी आयुर्वेदिक औषधि भी है और इसके पत्ते शरीर के हर छोटे-बड़े रोग को दूर करने में कारगर सिद्ध होते हैं. यह बात वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित है कि तुलसी का पौधा अपने आसपास की हवा को शुद्ध करता है.

सूर्य नमस्कार

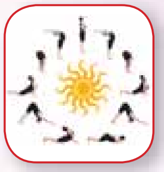

सुबह स्नान के बाद सूर्य को जल चढ़ाने का प्रावधान हिंदू धर्म में है लेकिन इसके पीछे वैज्ञानिक सत्य है कि सूर्योदय की किरणें स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी हैं.

उपवास रखना

उपवास रखने का उद्देश्य चाहे धार्मिक होता हो लेकिन इसके पीछे का वैज्ञानिक सत्य यह है कि उपवास प्रक्रिया से पाचन क्रिया संतुलित और तंदुरुस्त रहती है तथा शरीर स्वच्छ रहता है.

पूजा की घंटी और शंख नांद

पूजा की घंटी का महत्व शायद कुछ ही लोग जानते हैं. वैज्ञानिक तथ्य यह है कि मंदिर या किसी भी अर्चना स्थल पर पूजा की घंटी और शंख नाद

से वातावरण कीटाणु मुक्त और पवित्र होता है. शंख की ध्वनि से मलेरिया के मच्छर भी खत्म हो जाते हैं.

गायत्री मंत्र

गायत्री मंत्र या अन्य किसी मंत्र का उच्चारण जहां एक ओर पूजा को पूर्णत: प्रदान करता है वहीं मन को केंद्रित करके हमारा शारीरिक विकास करता है.

हवन

हवन करने का उद्देश्य किसी विशेष पूजा को करना तो होता ही है साथ ही हवन सामग्री वातावरण को भी शुद्ध करती है. हवन सामग्री में देसी घी, कपूर, आम की लकड़ी और दूसरी सामग्री होती है जिससे हवा में फैले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं.

गंगा

गंगा को पावन इसलिए माना जाता है क्योंकि इसके जल में कुछ ऐसे प्राकृतिक तत्व होते हैं जिनके संपर्क में आने से शरीर रोगमुक्त और निर्मल हो जाता है.

पूजा करना

पूजा करना एक धार्मिक कर्म तो है ही साथ ही यह मन की एकाग्रता को बढ़ाने में सहायक होता है.

पूजा के दिए जलाना

पूजा में दिया जलाना, पूजन कर्म का अनिवार्य अंग है, लेकिन क्या आप जानते हैं कि दिया अगर देसी घी से जलाया जाए तो हवा में घुली कार्बन डाइऑक्साइड नष्ट हो जाती है और तेल के दिये से भी हानिकारक कीटाणु नष्ट हो जाते हैं.

पीपल की पूजा

यूं तो शनिवार के दिन पीपल के पेड़ के नीचे तेल का दिया जलाने का प्रावधान शनिदेव की पूजा अर्चना के रूप में माना जाता है, लेकिन असल में पीपल का पेड़ प्रचुर मात्रा में ऑक्सीजन देता है.

तिलक लगाना

किसी भी पूजा कर्म का आरंभ माथे पर तिलक लगाने से होता है. लेकिन इस तिलक का दूसरा पहलू यह है कि हमारी दोनों आंखों के बीच में एक नर्व पॉइंट होता है जहां तिलक लगाकर हाथ से हलके दबाव से उसका संचार बढ़ाया जाता है. इससे एकाग्रता की शक्ति बढ़ती है और साथ ही मस्तिष्क में रक्त की आपूर्ति को भी यह नियंत्रण में रखता है.

मंत्रोच्चारण

एक ओर जहां पूजा मंत्रोच्चारण के बिना संपन्न नहीं होती वहीं दूसरी ओर मंत्र हमारे मस्तिष्क को शांत करते हैं और ब्लड प्रेशर को भी नियंत्रण में रखते हैं. साथ ही मंत्रोच्चारण से हमारे उच्चारण स्पष्ट होते हैं और याददाश्त अच्छी रहती है.

हल्दी

हल्दी के साथ ही विवाह कर्म की शुरुआत होती है और हर पूजा में हल्दी की गांठ होना अनिवार्य है. लेकिन यह सर्वविदित है कि हल्दी एक अच्छी एंटीबायोटिक है और कैंसर जैसे रोगों का उपचार करने की शक्ति रखती है.

जनेऊ

जनेऊ रखना केवल पांडित्य की ही निशानी नहीं है बल्कि यह एक बेहतरीन एक्यूप्रेशर का काम भी करता है.

शिखा रखना

शिखा रखने से न केवल धर्म की पहचान होती है बल्कि आयुर्वेद के अनुसार सिर के इस भाग में संवेदनशील कोशिकाओं का समूह होता है, जिसकी रक्षा शिखा द्वारा की जाती है.

दाह संस्कार

दाह संस्कार हिंदू धर्म का सबसे अंतिम कर्म है. वैज्ञानिक सत्य यह है कि शव दाह से प्रदूषण नहीं फैलता है.

गोमूत्र व गाय का गोबर

गाय का हर अंग स्वास्थ्य और वातावरण के लिए उपयोगी होता है. इसी कारण इसे 'मां' का दर्जा दिया गया है. गाय का मूत्र जहां कई औषधियों के निर्माण में काम आता है, वहीं गोबर के लेप से विषैले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं.

योग व प्राणायाम

आज योग को ना केवल भारत में बल्कि संपूर्ण विश्व में मान्यता मिल गई है. योग शरीर को बाहर और अंदर से स्वस्थ रखने में सहायक होता है.

इन्हीं सब विशेषताओं के कारण हिंदू धर्म में वैदिक परंपराओं को संसार का सबसे तर्कसंगत और वैज्ञानिक माना जाता है.

राधा रमण शर्मा
क्षे. का., कानपुर

रूढ़िवादी परंपरा एवं उनकी मान्यताएँ

परंपरा को दूसरे शब्दों में, निरंतरता भी कहा जा सकता है, परंपराएँ ज्ञान की वे श्रृंखलाएँ हैं, जो बिना किसी व्यवधान के एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में निरंतर अपनायी जाती हैं. परंपराओं का अनुपालन सही है या गलत, यह बहस का मुद्दा नहीं बनना चाहिए बल्कि, बहस इस बात पर होनी चाहिए कि एक बेहतरीन मानव अस्तित्व के विकास के लिये वो कौन सी परंपराएँ हैं, जो सर्वोत्तम हैं. किन परंपराओं का अनुपालन हमारे जीवन के दैहिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक स्तर को बेहतरीन स्थिति प्रदान कर सकता है. ऐसी कौन सी परंपराएँ हैं जो हमारे जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाती हैं. ऐसी परंपराएँ, जो तार्किक एवं वैज्ञानिक कसौटी पर खरी उतरती हैं, मानव अस्तित्व के लिए वरदान बन जाती हैं. लेकिन ऐसी भी परंपराएँ हैं, जो केवल आस्था के आधार पर ही प्रचलित हैं, उन्हें 'रूढ़िवादी परंपराएँ' कहा जा सकता है.

अगर हम अपने घर का, रोज़मर्रा का निकलने वाला कूड़ा नियमित साफ न करें तो, एक दिन हमारा घर कूड़े का ढेर बन जाएगा. उसी प्रकार यदि, समय की मांग एवं वैज्ञानिकता के आधार पर, परंपराओं में बदलाव नहीं लाया जाता है तो, उनका बोझ हमारे अस्तित्व को बोझिल कर देगा.

भारतीय संस्कृति सबसे पौराणिक संस्कृतियों में से एक है. हमारी संस्कृति के बाद अस्तित्व में आई, कई संस्कृतियों का जहाँ विनाश हो चुका है वहीं हमारी भारतीय संस्कृति निरंतर अडिग खड़ी है. इस संस्कृति में, समय के साथ, समाज की इतनी निर्मम रूढ़ियाँ आ गयी हैं, जिससे मनुष्य का जीवन दूभर हो गया है. इनमें से कई रूढ़ियाँ हैं - बाल विवाह, सती प्रथा, लड़के और लड़कियों में भेद-भाव, अछूतवाद, दहेज प्रथा, जाति के आधार पर भेद-भाव, इत्यादि.

पिछले कई वर्षों में समाज सुधारकों के प्रयासों के चलते, रूढ़िवादी परंपरा के विरुद्ध इस प्रकार के कठोर कानून बनाए गए हैं कि, ये प्रथाएँ लगभग खत्म हो गयी हैं, किन्तु आज भी ऐसी प्रथाएँ समाज में व्याप्त हैं, जो लोगों का जीवन बर्बाद कर रही हैं. एक ही गोत्र में विवाह किए जाने पर उसे बड़े सामाजिक अपराध के रूप में देखा जाता है. जो लोग एक ही गोत्र में विवाह न करने की परंपरा को तोड़ते हैं उन्हें समाज से बहिष्कृत किया जाता है, यहाँ तक कि, खाप पंचायतों द्वारा कई प्रकरणों में उन्हें मृत्यु दंड तक दिया जाता है. उत्तर भारत में इस प्रकार की घटनाओं की खबरें समाचार पत्र में अक्सर देखी जाती हैं. ऐसे मामलों में कई बार पुलिस भी अपनी भूमिका निभाने में असमर्थ रहती है. परंपराओं का अनुपालन जहाँ समाज के बड़े बुज़ुर्गों द्वारा करवाया जाता था, आज गुंडों द्वारा करवाया जाता है.

एक ही गोत्र में शादी न करने की परंपरा का निर्वाह बहुत ही वैज्ञानिक कारणों से करवाया जाता था. एक ही गोत्र एवं अपने ही परिवार के सदस्यों के बीच विवाह के परिणाम स्वरूप, होने वाले बच्चों में वंशानुगत रोग होने की संभावनाएं अत्यधिक हो जाती हैं. इसी कारण, परंपराओं के चलते इस

प्रकार के विवाहों से परहेज़ किया जाता था, किन्तु हम देखते हैं कि, इन परंपराओं के लिए, समाज में जागृति लाना, समाज के पढ़े लिखे और समझदार वर्ग का कार्य होता था किन्तु जब समाज का सुशिक्षित वर्ग ही मौन धारण करेगा तो, यह कार्य समाज के अनपढ़, असामाजिक लोगों द्वारा अपने तरीके से लागू करवाया जाएगा. वास्तव में कई परंपराओं के पीछे जो कारण हैं, अत्यंत संवेदनशील हैं किन्तु इन परंपराओं के प्रति समाज को संवेदनशील तरीके से जागृत करने की आवश्यकता है, न कि बिना सोचे समझे परंपराओं के अनुपालन हेतु हिंसा से काम लेने की. इसके बाद भी यदि कोई लड़का - लड़की एक ही गोत्र में शादी करने को आमादा है तो उन्हें परामर्श देने की पहल की जानी चाहिए. फिर भी न मानने पर भारतीय संविधान के अंतर्गत, यदि दोनों लड़का और लड़की बालिग हैं तो उन्हें विवाह करने का अधिकार है.

लड़के-लड़कियों में भेदभाव भी हमारे समाज की समस्या रही है. देश में लड़कों के अनुपात में लड़कियों की संख्या दिन प्रतिदिन घटती जा रही है. कारण है कन्या भ्रूण हत्या! कन्या भ्रूण हत्या हालांकि कानूनी अपराध है, फिर भी बेटे की चाह, केवल बेटे को ही वंश आगे बढ़ाने का ज़रिया समझना, बेटे को वंश की झूठी शान समझना, बेटी को बोझ समझने के कारण कई कन्या भ्रूणों की माँ के गर्भ में ही हत्या कर दी जाती है. अपने अहम और झूठे अभिमान की पूर्ति के लिए लोग हत्या जैसे महापाप करने से भी पीछे नहीं हटते. प्रति एक हज़ार लड़कों की तुलना में कुल लड़कियों की संख्या लिंगानुपात दर्शाती है. वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, सबसे कम लिंगानुपात वाले राज्य एवं केंद्र शासित प्रदेश इस प्रकार हैं - दमन एवं दीव का 618, दादर एवं नगर हवेली 774, चंडीगढ़ 818 , दिल्ली 868, हरियाणा का लिंगानुपात 879 है. इसका कारण है कन्या भ्रूण हत्या! स्वयं को प्रगतिशील समाज कहने वाले हम अपनी झूठी आन बान के चलते एक मासूम जीवन को खत्म कर देने से भी पीछे नहीं हटते. अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर जहाँ, संयुक्त राष्ट्र द्वारा विश्व के सभी राष्ट्रों से वर्ष 2030 तक लिंगानुपात को बराबर करने का आह्वान किया है, वहीं भारत जैसा विकासशील देश, कन्या भ्रूण हत्या जैसी कुरीतियों से आज भी जूझ रहा है.

आज का समाज भौतिकतावादी समाज है. इस भौतिकतावादी समाज का ही नकारात्मक प्रतिफल है दहेज प्रथा. जैसे-जैसे इंसान की भूख पैसे के लिए दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है वैसे-वैसे, दहेज प्रथा पिछले कुछ वर्षों में विकराल रूप लेती जा रही है. ऐसे कई समाज/जातियां हैं जिनकी सभ्यता में दहेज का नामों-निशान तक नहीं था, आज वे लोग भी दहेज लेने लगे हैं. विवाह के दौरान दहेज न लाने या कम लाने के कारण स्त्रियों के साथ मार-पीट, दुर्व्यवहार, ज़िंदा जलाने तक की घटनाएँ देखी जाती हैं. पैसे के लालच के चलते, लोग दरिंदगी की सभी हदें पार कर देते हैं. इस प्रकार की रुढ़िवादी परंपराओं को निश्चित ही अपने देश से हटाने के लिए कार्य किया जाना चाहिए.

जाति प्रथा / आश्रम

हमें इस बात पर गर्व होना चाहिए कि भारतीय सभ्यता के अंतर्गत मूल रूप से ऐसी परंपराओं का सृजन किया गया है जो परंपराएँ, हमें अपने जीवन काल में बेहतरीन आध्यात्मिक अनुभूति के माध्यम से जीवन काल में ही स्वर्ग का अनुभव करवा सके. किन्तु स्वार्थ सिद्धि और भौतिकतावादी सोच के दुष्प्रभाव से ये परंपराएँ रुढ़िवादी बनकर हमारे अस्तित्व को ही नष्ट करने पर तुली हुई हैं. हम में से प्रत्येक को ऐसी परंपराओं का निर्वहन करना चाहिए जो केवल स्वयं के लिए नहीं बल्कि पूरे मानव समाज के लिए हितकारी हो!

निधि सोनी
क्षे.का., इंदौर

क्षे.का. नासिक को दि. 21.06.2019 को नराकास द्वारा वर्ष 2018-19 के उत्कृष्ट कार्यनिष्पादन हेतु द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ. डॉ. सुनीता यादव, उप निदेशक, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के कर कमलों से पुरस्कार प्राप्त करते हुए क्षे. का. नासिक के उप क्षेत्र प्रमुख श्री विजय डोंगरवार एवं राजभाषा अधिकारी श्रीमती कुमुद ढाकने

दि.21-05-2019 को बैंक नराकास, जबलपुर की 65 वीं बैठक में राजभाषा में उत्कृष्ट कार्य हेतु वर्ष 2018-19 हेतु क्षे. का. जबलपुर को प्रथम पुरस्कार नराकास के अध्यक्ष सुश्री जमुना लोहिया (उ.म. प्र., एस. बी. आई.) द्वारा श्री अरुण कुमार, क्षेत्र प्रमुख को राजभाषा शील्ड एवं श्री ऋषि शंकर चौधरी (राजभाषा) को प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया गया.

दि. 17.05.2019 को बैंक ऑफ बड़ौदा के तत्वावधान में नराकास की बैठक में हमारी हिम्मतनगर शाखा के शाखा प्रमुख श्री गोविंद मीणा को प्रथम पुरस्कार के रूप में शील्ड देकर सम्मानित करते हुए डॉ. सुनीता यादव, उप निदेशक, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार.

रीवा नराकास की दि. 10 जून 2019 को आयोजित प्रथम बैठक में उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु वित्तीय वर्ष 2018-19 के लिए 'विशिष्ट पुरस्कार' प्राप्त करते हुए रीवा क्षेत्र प्रमुख, श्री भोला प्रसाद गुप्ता एवं अग्रणी जिला प्रबन्धक, श्री रश्मेंद्र सक्सेना.

दि. 25-06-2019 को हमारी जोधपुर मुख्य शाखा (क्षे. का., उदयपुर) को प्राप्त नराकास का द्वितीय पुरस्कार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,भारत सरकार, नई दिल्ली के सहायक निदेशक, श्री नरेंद्र मेहरा से प्राप्त करते हुए श्री नरपत गहलोत.

विजयवाड़ा को राजभाषा में उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु वर्ष 2018-19 का प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ. पुरस्कार प्रदान करते हुए उप निदेशक, गृह मंत्रालय; श्री टेकचंद तथा पुरस्कार ग्रहण करते हुए 'यूनियन बैंक ऑफ इंडिया' के क्षेत्र प्रमुख डॉ के. रवीद्रनाथ और राजभाषा अधिकारी, एस. बी कांबले.

नराकास, मदुरै के हिन्दी दिवस के अवसर पर क्षे. का., मदुरै में पदस्थ राजभाषा अधिकारी, सुभाष चन्द्र को नराकास के श्रेष्ठ राजभाषा अधिकारी का प्रथम पुरस्कार प्रदान करते हुए नराकास अध्यक्ष, श्री टी एस बालाचंद्रन.

नराकास, मदुरै के हिन्दी दिवस के अवसर पर क्षे.का. मदुरै में पदस्थ सुरक्षा अधिकारी, श्री प्रवीण कुमार एम. को 'हिन्दी शब्द मिलान प्रतियोगिता' में प्रथम पुरस्कार प्रदान करते हुए नराकास अध्यक्ष, श्री टी एस बालाचंद्रन.

नराकास की छमाही बैठक में नराकास अध्यक्ष, श्री ललित जे. माहेश्वरी (उप महाप्रबंधक, बीएसएनएल) से नराकास, कोटा का द्वितीय पुरस्कार कोटा मुख्य शाखा के लिए प्राप्त करते हुए शाखा प्रमुख, श्री अनिल कुमार और श्री रामराज मीणा.

वर्ष 2018-19 हेतु नराकास, करनाल तथा श्री पी. के. शर्मा, उप निदेशक, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग एवं नराकास के अध्यक्ष डॉ. आर. आर. बी. सिंह, निदेशक एवं कुलपति एनडीआरआई, करनाल द्वारा क्षे. का. करनाल के राजभाषा अधिकारी, श्री पवन कुमार एवं सुश्री निहारिका को प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया.

उप निदेशक (कार्यान्वयन), क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (उत्तरी क्षेत्र), गाजियाबाद के कर कमलों से नराकास बैंक, मेरठ का द्वितीय पुरस्कार प्राप्त करते हुए क्षेत्र प्रमुख, श्री बी. एन. सिंह तथा सहायक प्रबंधक (राजभाषा) सुश्री श्वेता यादव.

नराकास के तत्वावधान में सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया द्वारा आयोजित निबंध लेखन प्रतियोगिता में हमारे बैंक द्वारा प्रतिभागिता दर्ज की गई एवं नराकास की 40 वीं बैठक में विजेताओं को पुरस्कृत किया गया. हमारे क्षे. का. सिलीगुड़ी में कार्यरत श्री हर्ष रंजन (सहायक प्रबन्धक, आईटी) एवं सिलीगुड़ी मुख्य शाखा में कार्यरत सुश्री नूपुर झा (सहायक प्रबन्धक) को क्रमश: तृतीय एवं प्रोत्साहन पुरस्कार हेतु प्रमाण पत्र एवं पुरस्कार राशि देकर सम्मानित किया गया.

दिनांक 29.04.2019 को नराकास (बैंक), आगरा की 12वीं अर्धवार्षिक बैठक में हमारे क्षे. का., आगरा को राजभाषा कार्यान्वयन हेतु प्राप्त तृतीय पुरस्कार श्री अजय मलिक, उप निदेशक (का.) उत्तर क्षेत्र, गृह मंत्रालय एवं श्री दलवीर सिंह, अध्यक्ष, नराकास (बैंक) से ग्रहण करते हुए श्री वी पी पाण्डेय, उप क्षेत्रीय प्रमुख, क्षे. का. आगरा.

दि. 30.05.2019 को नराकास, पटियाला की छमाही बैठक में राजभाषा में उत्कृष्ट कार्य निष्पादन हेतु हमारी पटियाला मुख्य शाखा को तृतीय पुरस्कार प्राप्त हुआ. शाखा पटियाला की टीम के साथ राजभाषा अधिकारी सुश्री रीता देवी.

दिनांक 25 अप्रैल 2019 को क्षे. का., दुर्गापुर को नराकास का विशिष्ट पुरस्कार, नराकास अध्यक्ष श्री अनिर्बान दास गुप्ता द्वारा प्रदान किया गया. पुरस्कार लेते हुए मुख्य विपणन अधिकारी, श्री अरविंद कुमार.

दिनांक 26.06.2019 को सम्पन्न नराकास, ग्वालियर की बैठक में वार्षिक पुरस्कार वितरण कार्यक्रम में समिति के अध्यक्ष, श्री के.एस. वाल्दिया द्वारा क्षेत्र प्रमुख, श्री सोवन सेनगुप्ता, क्षे. का. ग्वालियर को द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया. इस अवसर पर श्री हिमांशु पाटकर को भी उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन हेतु पुरस्कृत किया गया.

क्षे. का., कोल्हापुर के अंतर्गत उस्मानाबाद शाखा को वर्ष 2018-19 के दौरान राजभाषा नीति के श्रेष्ठ कार्यान्वयन में सराहनीय योगदान के लिए नराकास, उस्मानाबाद द्वारा तृतीय पुरस्कार प्रदान किया गया.

दि. 25.06.2019 को नराकास, भटिंडा की प्रथम बैठक के दौरान राजभाषा में उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु ज्वाइंट कमिश्नर, आयकर, श्री पी. के. शर्मा से तृतीय पुरस्कार प्राप्त करते हुए भटिंडा मुख्य शाखा के शाखा प्रबन्धक, श्री राजीव नारंग.

दि. 25.06.2019 को आयोजित नराकास, मंगलुरु की अर्धवार्षिक बैठक में क्षे. का. मंगलुरु को राजभाषा के सफल कार्यान्वयन हेतु एम आर पी एल के प्रबंध निदेशक एवं सी ई ओ श्री एम. वेंकटेश से द्वितीय पुरस्कार प्राप्त करते हुए क्षे. का., मंगलुरू के उपमहाप्रबंधक, श्री नंजुंडप्पा टी; मुख्य प्रबंधक श्री मनोज अम्बष्टा; राजभाषा अधिकारी श्री राहुल कुमार. इस अवसर पर कॉर्पोरेशन बैंक के महाप्रबंधक, श्री अशोक चंद्र; कार्यपालक निदेशक, श्री बीरूपाक्ष मिश्रा; प्रबंध निदेशक एवं सी ई ओ, श्रीमती पी वी भारती; गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, भारत सरकार के उपनिदेशक श्री कुमार पाल शर्मा उपस्थित रहे.

नराकास, अंगोल की अर्धवार्षिक बैठक का आयोजन दि. 16.05.2019 को सिंडिकेट बैंक, क्षे. का., अंगोल में किया गया. इस बैठक में श्री टेक चंद, उप निदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग, भारत सरकार द्वारा बेहतरीन राजभाषा कार्यान्वयन हेतु हमारी अंगोल शाखा, नेल्लूर को वर्ष 2018-19 हेतु सांत्वना पुरस्कार प्राप्त हुआ. यह पुरस्कार इस मायने में खास रहा कि क्षे. का., नेल्लूर की स्थापना के पश्चात, राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में प्राप्त यह पहला पुरस्कार है.

राजभाषा समाचार

हमारी माउंट आबू शाखा का दि. 03.05.2019 को गृह मंत्रालय, नई दिल्ली के सहायक निदेशक, श्री नरेंद्र सिंह मेहरा द्वारा राजभाषा विषयक निरीक्षण किया गया. श्रीमती स्वाति गुप्ता, शाखा प्रमुख, श्री नरेंद्र मेहरा, सहायक निदेशक, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय का स्वागत करते हुए.

गाजीपुर क्षेत्र के अंतर्गत दि. 10.05.2019 को शाखा प्रमुखों हेतु विशेष एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया. चित्र में, क्षेत्रीय प्रबन्धक, श्री संजय नारायन के साथ सभी सहभागी शाखा प्रबन्धकगण.

दिनांक 29-30 अप्रैल, 2019 को स्टाफ महाविद्यालय, बेंगलूरु में आयोजित कंप्यूटर आधारित दो दिवसीय हिन्दी कार्यशाला के दौरान प्रतिभागियों के साथ लिए समूह चित्र में प्राचार्य श्री सर्वेश रंजन, उप महाप्रबंधक (बीच में) व उप प्राचार्य सुश्री चेतना पांडे, सहायक महाप्रबंधक (बाएँ से द्वितीय) के साथ (बाएँ से) संकाय श्री दीपक कुमार, सहायक प्रबंधक (राभा), श्री कृष्ण कुमार, प्रबंधक (राभा) तथा श्री साहेबराव बी.कांबले, सहायक प्रबंधक(राभा).

अखिल भारतीय वार्षिक राजभाषा समीक्षा बैठक- दि. 08-09 अप्रैल, 2019

राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी अखिल भारतीय राजभाषा वार्षिक समीक्षा बैठक दिनांक 08 एवं 09 अप्रैल, 2019 को स्टा. प्र. कें., लखनऊ में आयोजित की गई, जिसमें 62 राजभाषा अधिकारियों ने भाग लिया. समीक्षा बैठक का उद्घाटन, श्री लाल सिंह, महाप्रबंधक, क्षेत्र महाप्रबंधक कार्यालय, लखनऊ द्वारा किया गया उक्त अवसर पर श्री डी. के. नायक, उप महाप्रबंधक (ऑडिट), अं.ले.प.का., बेंगलूरू; श्री अवधेश कुमार अग्निहोत्री, उप अंचल प्रमुख, लखनऊ; श्री ए. के. श्रीवास्तव, सहायक महाप्रबंधक, क्षे.म.प्र.का., लखनऊ; श्री अखिलेश कुमार, केंद्र प्रभारी, स्टा.प्र.कें., लखनऊ; श्री राजेश कुमार, सहायक महाप्रबंधक(राजभाषा) एवं श्री नवल किशोर दीक्षित, सूचीबद्ध सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा), केंद्रीय कार्यालय, मुंबई उपस्थित थे. इस अवसर पर बैंक द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'सायबर सुरक्षा एवं डिजिटल बैंकिंग के विविध आयाम' तथा अन्य कार्यालयों द्वारा प्रकाशित गृह पत्रिकाओं का भी विमोचन किया गया और श्री लाल सिंह, महाप्रबंधक द्वारा विजेता कार्यालयों के राजभाषा अधिकारियों को वर्ष 2017-18 की आंतरिक राजभाषा शील्ड का वितरण किया गया तथा भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग से पुरस्कार प्राप्त कार्यालयों के राजभाषा अधिकारियों एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की ओर से प्रथम पुरस्कार प्राप्त कार्यालयों के राजभाषा अधिकारियों को भी सम्मानित किया गया.

दिनांक 09.04.2019 के सत्र का उद्घाटन श्री एस. पी. कर, क्षेत्र प्रमुख, लखनऊ द्वारा किया गया. इस समीक्षा बैठक में तीनों भाषिक क्षेत्रों की समीक्षा की गई एवं भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग की वार्षिक कार्ययोजना के तहत वर्ष 2019-20 की तैयार वार्षिक कार्यान्वयन कार्ययोजना के अनुसार लक्ष्य प्राप्त करते हेतु सभी राजभाषा अधिकारियों को दिशानिर्देश प्रदान किए गए.

राजभाषा संगोष्ठी

दि. 21 जून, 2019 को केंद्रीय कार्यालय के वेतनमान IV एवं V के कार्यपालकों हेतु बोर्ड रूम, केंद्रीय कार्यालय में 'हिंदी कब, कहाँ, कैसे, खोजें समाधान, हिंदी है आसान' विषय पर राजभाषा संगोष्ठी का आयोजन किया गया. इस कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री योगेन्द्र सिंह, महाप्रबंधक और श्री राकेश कुमार गुप्ता, उप महाप्रबंधक द्वारा की गयी. इस कार्यक्रम में कुल 26 कार्यपालक उपस्थित रहे.

कार्यक्रम का शुभारंभ श्री योगेन्द्र सिंह, महाप्रबंधक एवं श्री राकेश कुमार गुप्ता, उप महाप्रबंधक द्वारा दीप प्रज्ज्वलन के साथ किया गया. श्री नवल किशोर दीक्षित, सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा) ने सभी अतिथियों और प्रतिभागियों का स्वागत किया एवं बताया कि बैंक में अन्य विभागों की तरह राजभाषा कार्यान्वयन को भी अत्यंत गंभीरता से लिया जाता है और इस राजभाषा संगोष्ठी में इतनी बड़ी संख्या में उच्च कार्यपालकों की उपस्थिति इस बात का प्रमाण है कि यूनियन बैंक ऑफ इंडिया का केंद्रीय प्रबंधन राजभाषा कार्यान्वयन के प्रति भी उतना ही प्रतिबद्ध है.

दि. 19.06.2019 को बैंक नराकास, बड़ौदा के तत्वावधान में क्षे. का. बड़ौदा द्वारा सदस्य बैंकों हेतु 'ऋण अनुश्रवण' पर अंतर बैंक सेमिनार का आयोजन किया गया, इस सेमिनार की अध्यक्षता श्री अखिलेश कुमार, क्षेत्र प्रमुख, बड़ौदा द्वारा की गयी एवं कार्यक्रम का संचालन श्री नितिन गोसावी, वरिष्ठ प्रबन्धक (सीएमआरडी) द्वारा किया गया. कार्यक्रम में ऑनलाइन प्रश्नोत्तरी का आयोजन भी किया गया, इस अवसर पर नराकास, बड़ौदा सचिव श्रीमती पारुल मशर, सहा महाप्रबंधक (राजभाषा) उपस्थित रही.

दि.30.05.2019 को क्षे.म.प्र. एवं क्षे. का. भोपाल , स्टा. प्र. कें. अंचलीय सतर्कता कक्ष, अंचलीय लेखा परीक्षा कार्यालय के स्टाफ सदस्यों के लिए 'साइबर सुरक्षा' पर विशेष सत्र का आयोजन किया गया. इस सत्र हेतु साइबर सिक्यूरिटी कॉर्पोरेशन के प्रेसिडेंट डॉ. हेरोल्ड डी'कोस्टा को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था जिन्होंने मोबाइल एवं इंटरनेट प्रयोग में बरतने वाली सावधानियों पर विशेष प्रकाश डाला. कार्यक्रम में लगभग 130 स्टाफ सदस्यों ने भाग लिया. कार्यक्रम की अध्यक्षता क्षेत्र महाप्रबंधक श्री विनायक व्ही. टेंभूर्णे, क्षेत्र प्रमुख, भोपाल, श्री गुरतेज सिंह द्वारा की गयी.

राजकोट क्षेत्र की जूनागढ़ शाखा का राजभाषा विषयक निरीक्षण दि. 24.04.2019 को संपन्न हुआ. निरीक्षण कर्ता डॉ. सुनीता यादव, उप निदेशक, कार्यान्वयन (राजभाषा विभाग), गृह मंत्रालय का स्वागत करते हुए शाखा प्रबंधक, एस डी वर्मा, जूनागढ़ शाखा तथा राजभाषा अधिकारी, राजेश जोशी, क्षे. का. राजकोट.

दि. 15.06.2019 को गुवाहाटी क्षेत्र की शिलांग शाखा का श्री बदरी यादव, अनुसंधान अधिकारी द्वारा राजभाषा विषयक निरीक्षण किया गया.चित्र में, शिलांग शाखा के स्टाफ सदस्यों के साथ श्री बदरी यादव, अनुसंधान अधिकारी.

दि. 8.06.2019 को आयोजित ई-गृह पत्रिका विमोचन के अवसर पर अपने कर-कमलों से पत्रिका का विमोचन करते हुए मुख्य अतिथि डॉ. अनिल सुलभ, अध्यक्ष, बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना, श्री जी. बी. त्रिपाठी, उप महाप्रबंधक, क्षेत्रीय कार्यालय, पटना, श्री जे.पी. मिश्रा, अर्थ मंत्री, बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना, श्री शैलेन्द्र कुमार, उप क्षेत्र प्रमुख, पटना, श्री एच.के. जेना, मुख्य प्रबंधक (परिसर एवं साहयक सेवाएं विभाग) तथा डॉ. विजय कुमार पाण्डेय, राजभाषा अधिकारी सह संपादक, ई-गृह पत्रिका तथा अन्य.

दि.20.06.2019 को क्षे.का.भोपाल द्वारा क्षेत्राधीन शाखाओं के स्टाफ सदस्यों के लिए एक दिवसीय हिन्दी क्लासरूम कार्यशाला का आयोजन क्षे.का. के सभागार में किया गया. क्षेत्र महाप्रबंधक, श्री विनायक व्ही. टेम्भूर्ने एवं क्षेत्र प्रमुख, श्री गुरतेज सिंह ने प्रतिभागियों को संबोधित किया. कार्यशाला में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की लिपियों की रक्षा और संरक्षण अभियान में संलग्न गर्भनाल न्यास द्वारा 'इनस्क्रिप्ट की बोर्ड सीखो' के विशेष सत्र में न्यास के सचिव श्री आत्माराम शर्मा द्वारा डेस्कटॉप, लैपटाप, मोबाइल तथा टैब पर इनस्क्रिप्ट की बोर्ड के संचालन तथा इन्स्टालेशन संबंधी तमाम पद्धतियों से प्रतिभागियों को अवगत कराया गया.

कितनी प्रगतिशील और आधुनिकता के साथ?

संस्कृति एवं सभ्यता मानव जीवन के अभिन्न अंग हैं . भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है एवं आज हमें विरासत में मिली है सभ्यता एवं संस्कृति प्रथम दृष्ट्या समान प्रतीत होते हैं किन्तु दोनों में बहुत अंतर है संस्कृति शब्द किसी देश या समाज की पहचान होती है जैसे कि हमारी भारतीय संस्कृति सम्पूर्ण विश्व में एक यही है जिसे हम सही मायनों में संस्कृति कह सकते हैं, क्योंकि बाकी सब सभ्यता के क्रम में रखी जा सकती हैं, सभ्यता जो भोजन हम खाते हैं, जो कपड़े पहनते हैं, जिन इष्ट की हम पूजा करते हैं वो हमारी सभ्यता है,सभ्यता संस्कृति की सूचक होती है, सभ्यता भौतिक होती है, जबकि संस्कृति अभौतिक.

संस्कृति का मतलब होता है "सुधरी हुई स्थिति या उत्तम स्थिति" मनुष्य अपनी बुद्धि के प्रयोग से सदैव उन्नति करता आया है उसने सभी क्षेत्रों में उत्तरोतर उन्नति की है. कला, संगीत, धर्म, समाज, रीतिरिवाज, परंपराएँ, जीवन जीने का तरीका, पर्व एवं त्योहार, दर्शन, शिल्पकला इत्यादि अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में उसकी उन्नति दृष्टिगत है, इस प्रकार संस्कृति मानव एवं मानसिक पर्यावरण के बीच समन्वय बनता है एवं ये एक समाज से दूसरे समाज और एक देश से दूसरे देश में बदलती रहती है इसका विकास राष्ट्र एवं सामाजिक स्तर पर होने वाले ऐतिहासिक एवं ज्ञान संबंधी प्रक्रिया, प्रगति पर आधारित होता है उदाहरण के लिए हमारे अभिवादन के तरीके, खाने पीने के तरीके, धर्म एवं रीति रिवाज पश्चिम से भिन्न हैं सही अर्थ में किसी देश के लोग अपनी संस्कृति से ही पहचाने जाते हैं.

परंपरा का अर्थ है बिना व्यवधान के अनवरत जारी रहना. हमारे देश में ऐसे कई क्षेत्र हैं जो सदियों से अपने प्राथमिक रूप से चले आ रहे हैं जैसे गुरु शिष्य परंपरा, दीपावली एवं दशहरा मिलन की परंपरा आदि.

आधुनिक युग में भारतीय संस्कृति एवं परंपरा कठिन दौर से गुजर रही है, प्राचीन संस्कृति इस बात की पुष्टि करती है कि हमारा इतिहास सांस्कृतिक रूप से अत्यंत समृद्ध एवं प्राचीन रहा है. यहाँ के ऋषि मुनियों एवं तत्पश्चात राजा महाराजाओं ने लोकतंत्रीय व्यवस्थाओं एवं सर्व धर्म संप्रदाय का समान आदर किया और नीतियों का अनुसरण किया. भारत की एक आदर्श परंपरा थी जिसका पालन राजतंत्र ने भी किया और लोकतंत्र ने भी! किन्तु आज हमारा देश जिस दौर से गुजर रहा है उसमें संस्कृति की पदचाप कहीं नहीं सुनाई देती, एक तरफ सरकार जहाँ संस्कृति का भान है. दूसरी तरफ पूर्णतया पश्चिम सभ्यता का जोर-शोर से प्रचार-प्रसार किया जा रहा है. वास्तविकता में हमारे सांस्कृतिक एवं पारंपरिक मूल्य नष्ट होते जा रहे हैं. यद्यपि संस्कृति संरक्षण हेतु अनगिनत संस्थाएं बनीं किन्तु संस्कृति उनसे दूर-दूर बनी रही क्योंकि संस्कृति कोई देवता नहीं जो मंदिर में पूजनीय है अपितु यह एक एहसास है जो हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा है. हमारा वजूद इसी से है. दूसरे देश में हम हमारी संस्कृति के कारण जाने जाते हैं. लोग काशी बनारस हमारी प्राचीन सांस्कृतिक समृद्धि देखने आते हैं.

संस्कृति एक ऐसा व्यापक क्षेत्र है जिसकी शरण में भगवान एवं मानव दोनों शरण पाते हैं इस व्यापक अनुभूति को कैद नहीं किया जा सकता. जो होना चाहिए था हुआ उसका उल्टा, आज हमारे इतिहास का सात्विक प्राचीन रूप नष्ट होता जा रहा है. आर्थिक दासता के बादलों में पश्चिमी जीवन शैली की विकृतियों से भारतीयों में घुटन एवं तनाव के लक्षण उभरने लगे हैं.

सांस्कृतिक स्तर पर हमारी स्थिति काफी अच्छी नहीं है न प्राचीन संस्कृति बची है न आधुनिकता आ पायी है, न हम पूरब के रह गये, न पश्चिम के हो पाये, एक अजीब सी गरीब संस्कृति के मोहपाश में कैद होते जा रहे हैं "हम भारतीय हैं ऐसा गर्व से कहने में झिझक होती है".

यद्यपि भारतीय संस्कृति का प्राचीन स्वरूप अभी भी जीवंत है गाहे बगाहे वो परिलक्षित भी होता है हमारी अनेकता में एकता की परंपरा अभी भी सुरक्षित है किन्तु एकता के आधारभूत रंग धूमिल हो गए हैं और विविधता के सतही रंग दिखने लगे हैं. हमारी अपनी भाषा, रहन-सहन, खान - पान और पहनावा भले ही अलग है परंतु संस्कृति एक ही है. आज जो कुछ भी हमारे पास है वो हमारी हजारों वर्षों की जीवन शैली की ही देन है. चूंकि भारतीय संस्कृति निरंतर गतिशील है इसलिए उसमें देशकाल और धर्म भी लक्षित होते हैं. संसार की जिन संस्कृतियों में काल के अनुसार अपने को अनुकूल बनाने की दृष्टि नहीं होती है वो काल की चपेट में आ जाती है.

इसलिए संस्कृति वह सीमा भी निर्धारित करती है जहां से हमें परिवर्तन एवं संरक्षण हेतु दृष्टि मिलती है. आधुनिकता के सामने कितना झुकें यह शक्ति एक गतिशील सांस्कृतिक जीवन शैली का अविभाज्य अंग है.

संस्कृति यम और नियम के रूप में जीवन शैली को निर्मित करती है,यम शील की स्थापना करते हैं या सार्वभौमिक गुण है जो हमें उदारता की तरफ प्रेषित करते हैं. हमें आज ऐसी ही संस्कृति की फिर से जरूरत है एवं हमें आज फिर एक बार पुरातन भारत की आवश्यकता है ताकि हम एक बार फिर अपनी पहचान को पुनर्जीवित कर सकें एवं पूरे विश्व में भारतीय संस्कृति की पताका फिर लहरा सकें. कविता के माध्यम से अपनी बात रखना चाहूँगा :-

बात जो बताती है हज़ार वर्ष पुरानी है,
विलुप्त हो रही जो रीत है वही मधुर संगीत,
बड़ों का आदर, नमस्कार, शून्य का आविष्कार
ॐ की मधुर ध्वनि, भारतीय संस्कृति
सही जीवन की यही विधि औरत का सम्मान जैसे देवी
अतिथि यहाँ है भगवान, प्राचीन यहाँ के पुराण
अनेकता में एकता हिन्द की विशेषता.
यही है हमारी संस्कृति, यही है भारत.

श्री पराग जैन,
सेवा शाखा, इंदौर

राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3(3)

किसी भी स्वाधीन देश के लिए जो महत्व उसके राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का होता है, वही राजभाषा का भी है. हिन्दी को भारत की राजभाषा के रूप में भारतीय संविधान में 14 सितंबर, 1949 को स्वीकार किया गया. हम सभी जानते हैं कि भारत में सरकारी काम-काज हेतु राजभाषा हिन्दी है, परंतु ऐसा भी हो सकता है कि राजभाषा से संबंधित सांविधिक प्रावधानों से सभी लोग पूर्णतया भिज्ञ न हों. वैसे तो हम यहाँ धारा 3(3) की बात करने जा रहे है परंतु चलिए राजभाषा संबंधी संक्षिप्त जानकारी से भी थोड़ा रूबरू होते हैं. राजभाषा अर्थात वह भाषा जिस भाषा में राज्य या प्रशासन का काम-काज होता है. वैसे तो संविधान में हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित कर दिया गया था, लेकिन सरकारी कार्यों में अंग्रेजी के स्थान पर पूर्ण रूप से हिन्दी लाने के लिए प्रयास अभी तक जारी हैं. संविधान के अनुच्छेद 343(1) द्वारा देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया और देश में राजभाषा के व्यापक प्रचार-प्रसार हेतु राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के अनुरोध पर सन् 1953 से प्रतिवर्ष 14 सितंबर को 'हिन्दी-दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा.

26 जनवरी, 1950 को संविधान लागू होने से 15 वर्षों की अवधि के लिए अंग्रेजी को हिन्दी की सहभाषा के रूप में स्वीकार करते हुए हिन्दी में प्रशासनिक कार्य शुरू किया गया ताकि हिन्दी इन 15 वर्षों की अवधि में राजभाषा के तौर पर अपना एक महत्वपूर्ण स्थान बना सके.

संविधान के अनुच्छेद 343(3) के अनुसार संसद को यह अधिकार था कि 26 जनवरी, 1965 के बाद भी विनिर्दिष्ट सरकारी कार्यों में अंग्रेजी के प्रयोग हेतु वह अधिनियम पारित कर सकती थी. अत: इसी शक्ति का प्रयोग करते हुए राजभाषा अधिनियम, 1963 पारित किया गया, जिसे 26 जनवरी, 1965 से लागू किया गया. इसके तहत भारत सरकार के कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी में काम-काज करना और उसका विस्तार करना आवश्यक हो गया.

राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3 की उपधारा (3), जिसे हम धारा 3(3) के नाम से जानते हैं, में यह कहा गया है कि 14 प्रकार के दस्तावेज़ अनिवार्य रूप से द्विभाषी रूप में जारी किए जाएं. ये दस्तावेज़ निम्नानुसार हैं:

i. सामान्य आदेश
ii. संकल्प
iii. नियम
iv. अधिसूचनाएं
v. प्रशासनिक एवं अन्य रिपोर्ट
vi. प्रेस विज्ञप्तियाँ
vii. सरकारी कागज पत्र
viii. संविदाएं
ix. करार
x. अनुज्ञप्तियाँ
xi. अनुज्ञापत्र
xii. टेंडर नोटिस
xiii. टेंडर फार्म
xiv. संसद के समक्ष प्रस्तुत की जाने वाली प्रशासनिक एवं अन्य रिपोर्टें

इस अधिनियम के अनुसार भारत सरकार के सभी मंत्रालयों/विभागों तथा उनसे संबंधित अधीनस्थ कार्यालयों, उपक्रमों आदि के लिए सांविधिक अपेक्षा है कि वे धारा 3(3) के अंतर्गत जारी होने वाले उपर्युक्त सभी दस्तावेज़ द्विभाषी रूप में अर्थात हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में साथ-साथ जारी करें. धारा 3(3) के अनुपालन के संबंध में सभी केंद्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों एवं बैंकों द्वारा जारी किए जाने वाले उपर्युक्त सभी 14 प्रकार के दस्तावेज़ द्विभाषी (हिन्दी/अंग्रेजी) रूप में जारी किया जाना अनिवार्य है और इन्हें जारी करते समय यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि हिन्दी रूपांतर, अंग्रेजी के ऊपर रहे तथा फॉन्टस् के आकार में समानता हो. इन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले प्राधिकारी की यह ज़िम्मेदारी है कि वह इन दस्तावेजों को हिन्दी और अंग्रेजी में साथ-साथ जारी करना सुनिश्चित करे.

समस्त राष्ट्रीयकृत बैंकों/केंद्र सरकार के कार्यालयों/विभागों एवं सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों में धारा 3(3) का अनुपालन किया जाना अनिवार्य है. उदाहरण के तौर पर विभिन्न प्रकार के ज्ञापन जैसे स्थानांतरण आदेश, अनुशासनिक कार्रवाई, नामांकन पत्र, करार, ग्राहक और बैंक के बीच किए जाने वाले ऋण संबंधी अनुबंध (लैस में इसके 78 द्विभाषी प्रारूपों को अपलोड किया गया है ताकि शाखाएं/कार्यालय इसका उपयोग कर सकें); ग्राहकों को जारी की जाने वाली सूचनाएं, टेंडर नोटिस, आवधिक रिपोर्टें, संकल्प, कॉर्पोरेट स्तर/अन्य कार्यालय स्तर की बैठकों के कार्यवृत्त, प्रेस विज्ञप्तियाँ; परिपत्रों आदि सभी को द्विभाषिक रूप में जारी किया जाना अनिवार्य है.

प्रीति साव
राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, के.का. (मुंबई)

चंबा की शाम

प्रेरणा कभी भी, कहीं भी, किसी से भी मिल सकती है...
"माए नि मेरिए, शिमला दी राहे... चंबा कितनी दूर
कसौली नि बसना, शिमले नि बसना ...चंबा जाना जरूर"...

'चंबा जाना जरूर......' मोहित चौहान द्वारा लिखा हुआ यह गीत, इसे लोकगीत कहना ज्यादा उचित होगा. सोनू कक्कड़ एवं नेहा कक्कड़ की आवाज़ से सजा यह गीत मेरी चंबा यात्रा का प्रेरणा स्रोत बन गया.

चंबा से मेरे साक्षात्कार के पहले यह गीत जब भी मेरे कानों में तैरता था तो मैं चंबा की शाम की कल्पना में विचरने लगती थी. अब जब भी यह गीत सुनती हूँ तो चंबा के सुकून को फिर से महसूस कर पाती हूँ.

हाँ! तो मेरी यात्रा शुरू हुई बहुत सारे बदलावों के साथ! लेकिन पूरे झुण्ड में होने वाली यह यात्रा मेरी पहली एकल यात्रा उर्फ 'सोलो ट्रिप' बन गयी. बागडोगरा से प्रारम्भ करके चंबा की वादियों में पहुँचना मेरे लिए किसी सपने को जीने से कम न था.

चंबा की जमीं पर कदम रखते-रखते शाम हो चली थी और यकीन मानिए मेरे जीवन की सबसे खूबसूरत शाम जिसका वर्णन शब्दों में शायद ही किया जा सके फिर भी अगर कहें तो.... 'चंबा की शाम जैसे कोई दुल्हन का श्रृंगार'. बादलों को चूमते हुए पहाड़ों को चीरती लालिमा, जो

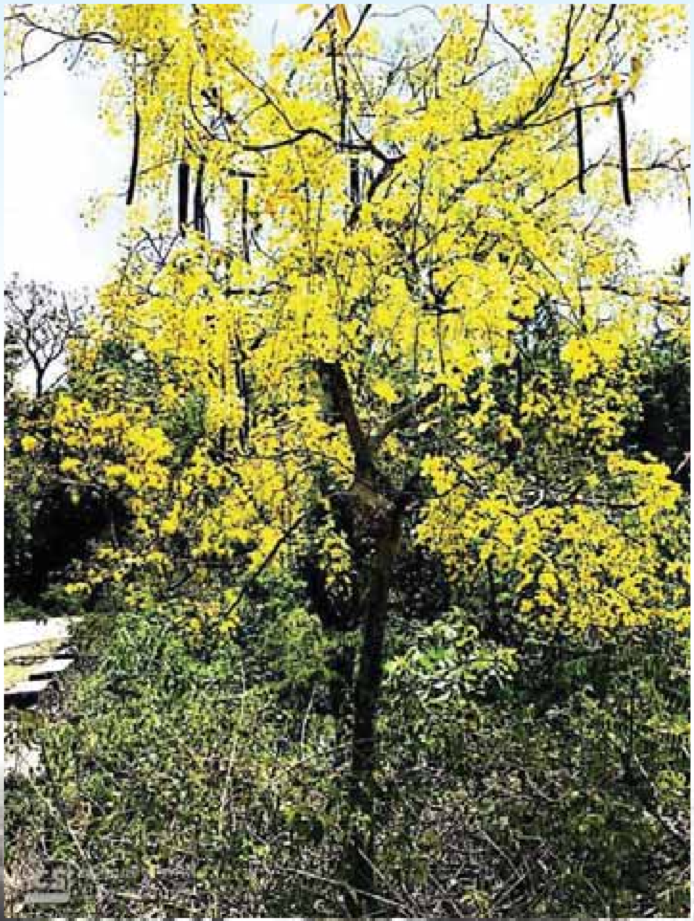

आँखों से हृदय तक सहज उतर जाती है, देवदार के पेड़, जैसे आकाश से मिलने हेतु अपने कद को प्रति क्षण, प्रति पल बढ़ा रहे हों! यह एक ऐसा मिलन दिखायी दे रहा था, जो आपको सम्मोहित करते हुये अजीब से रोमांच से भर दे रहा था. रोमांच भी ऐसा जो न आपने कभी महसूस किया हो. एहसास भी ऐसा जो ना कभी आपने सोचा हो. प्रकृति का यह विश्वास और जिजीविषा की पराकाष्ठा आपको बार-बार और हर बार यहाँ आने पर मजबूर कर देती है.

संध्या के 06.00 बजे मैं जैसे ही चंबा के होटल के निकट पहुंची, झमाझम बारिश और ओलावृष्टि ने जैसे मेरे आगमन का मुझे इनाम दिया हो. चंपावती मंदिर के पास होटल सिटि हार्ट में मेरा पड़ाव था. चूँकि यह होटल चंबा के बीच बाज़ार में है, तो शाम को होटल में सोने के बजाए हिमाचली खुशबू का आनंद लेने का सोचा. मैंने चंपावती मंदिर में जाकर दर्शन कर आस-पास के बाज़ार में हिमाचल की छाप, उसकी विशेषताएँ देखने, महसूस करने की चेष्टा की.

अगले दिन चंबा से लगभग 25 किलोमीटर की दूरी पर स्थित खजियार जाना एक सुखद अनुभव रहा. पहाड़ के टेढ़े-मेढ़े रास्तों से गुजरते हुए खजियार तक पहुँचना रोमांचकारी अनुभव रहा. खजियार में आप कुनकुनी धूप का मजा ले सकते हैं. साथ ही हिमाचली परिधान में पलों को यादगार कर रोप वे में अपनी तस्वीरें खिंचवा सकते हो या खरगोश को अपने हाथों में पकड़ कर उसके साथ पलों को खुशगवार बना सकते हो या फिर घुड़सवारी का लुत्फ़ लेना चाहो या पैराग्लाईडिंग का अनुभव भी लेना चाहते हो तो ले सकते हो. यह सारा आनंद आप सिर्फ खजियार में ही ले सकते हैं. सर्दियों में खजियार के चारों ओर लंबे तने देवदार के वृक्ष सफ़ेद चादर ओढ़ लेते हैं. बर्फ से ढका यह स्थान अत्यंत मनोहारी प्रतीत होता है. शायद इसलिए 07 जुलाई, 1992 को तत्कालीन वाइस काउन्सलर वैली टी ब्लेजर ने इसे 'इंडिया के मिनी स्विट्ज़रलैंड' के खिताब से नवाजा था.

खजियार में कई बॉलीवुड फिल्मों, यथा 'वजूद', 'गदर', 'हिमालय पुत्र' और 'लुटेरा' की शूटिंग भी हुई है.

खजियार से वापसी के समय रास्ते में एक छोटा सा व्यू पॉइंट है, जहां से आपको 'कैलाश मणि' के दर्शन होते हैं. सूर्य की रोशनी से उसकी लालिमा आंखों से सीधे हृदय तक उतर जाती है. कुछ क्षणों का यह पड़ाव ता उम्र आपकी स्मृतियों में तरोताजा रहेगा.

इस छोटी सी यात्रा में 'आज' को अपनी आँखों में समेटकर अगले दिन कुछ और दृश्यों को आँखों में भरने के उद्देश्य से मैं सो गयी.

कुछ ही दूरी पर स्थित हिल स्टेशन डलहौजी अपनी जलवायु के लिए सैलानियों में खासतौर पर जाना जाता है. यहां का तापमान चंबा से अमूमन 04-05 डिग्री कम रहता है और कुहासे की चद्दर में लिपटा हुआ डलहौजी, हिमाचल के उस क्षेत्र में पर्यटन हेतु आए हुए पर्यटकों के रूकने का पसंदीदा स्थान है. यहां छोटे-छोटे कई पार्क और यहाँ के हिमालय की खूबसूरती आपको सुखद एहसास से भर देती है.

'चमेरा' बांध रावी नदी के तट पर बनाया गया है. यह डलहौजी से 35 कि.मी. की दूरी पर स्थित है. इस बांध पर हाइड्रो इलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट बनाया गया है. यहां की खास बात यह है कि इस नदी के पानी का तापमान हमेशा कम और ज्यादा होता रहता है. यहाँ पर आकर आप रोइंग, नाव की सवारी, पैडल बोटिंग, मोटर बोटिंग, सेलिंग, कैनोइंग, एंगलिंग और कयाकिंग जैसे पानी के खेलों का आनंद उठा सकते हैं.

मेरी यह छोटी सी यात्रा अब अपने अंतिम चरण पर थी. चंबा से वापसी के लिए आपके पास दो विकल्प होते हैं. या तो आप अमृतसर जाईए या फिर चंडीगढ़! चूंकि अमृतसर से मेरी मुलाक़ात पहले भी हो चुकी थी अत: मैंने चंडीगढ़ हवाई अड्डे को अपना वापसी का पड़ाव बनाया.

चंबा से लौटते हुए आप रॉक गार्डेन, जलपा मंदिर भी जा सकते हैं. चूंकि हिमाचल को 'देव भूमि' के नाम से भी जाना जाता है, तो यहाँ मंदिरों के दर्शन आपको हर मोड़ पर हो जाएंगे. जालपा मंदिर का दर्शन अपने आप में एक अद्भुत और आध्यात्मिक रहा.

चंडीगढ़ में रोज़ गार्डेन, रॉक गार्डेन, आदि जैसे कई स्थान हैं परंतु समय और गर्मी को देखते हुए मैंने संध्या समय पिंजोरा गार्डेन में बिताने का निश्चय किया. यकीन मानिए, पूर्ण चंद्रमा की रात में पिंजोरा गार्डेन मेरे लिए किसी स्वर्ग से कम नहीं रहा. शीतल-शांत वातावरण आंखें उठा कर जहां तक देखिये खूबसूरती अपने पूरे पंख फैलाये दिखायी दे रही थी. एक सुकून, एक शांति और सैकड़ों यादें. साथ ही फिर आने की इच्छा के साथ विदा लेने का समय भी आ गया.

चंबा जाने के लिए नजदीकी हवाई अड्डा चंडीगढ़ या अमृतसर है. उसके पश्चात् आप सड़क मार्ग द्वारा हिमाचल की यात्रा कर सकते हैं.

जब कभी कोई शाम, खुद के साथ बितानी हो, तो चंबा को आप अपनी सूची में जरूर शामिल करिए.

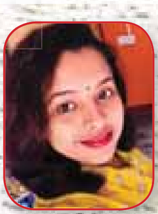

अपूर्वा सिंह
क्षे. का., सिलीगुड़ी

अंधविश्वास एवं परंपराएं

पूरे भारत की बात करें अथवा पूरे विश्व की यह बहुत ही रोचक विषय है कि अंधविश्वास क्या होता है तथा परंपराएं कब अंधविश्वास में बदल जाती हैं पता तक नहीं चलता है. यह उन देशों के लिए और भी महत्वपूर्ण होता है जहां सामाजिक पिछड़ेपन तथा शिक्षा की कमी है. कम पढ़े लिखे होने के कारण अंधविश्वास के प्रति लोगों का नजरिया देखने लायक होता है. ऐसा नहीं है कि यह केवल एक दिन में सब हो जाता है वरन् यह स्थापित होने में काफी वक्त लेता है परंतु एक बार स्थापित हो गया तो फिर अंधविश्वास पूरी तरह से परंपरा बन जाती है.

पहले मनुष्य अनेक क्रियाओं और घटनाओं के कारणों को नहीं जान पाता था. वह अज्ञानतावश समझता था कि इनके पीछे कोई अदृश्य शक्ति है. वर्षा, बिजली, रोग, भूकंप, वृक्षपात, विपत्ति आदि अज्ञात तथा, भूत, प्रेत और पिशाचों के प्रकोप के परिणाम माने जाते थे. ज्ञान का प्रकाश हो जाने पर भी ऐसे विचार विलीन नहीं हुए, बल्कि ये अंधविश्वास माने जाने लगे. आदिकाल में मनुष्य का क्रिया क्षेत्र संकुचित था इसलिए अंधविश्वासों की संख्या भी अल्प थी. ज्यों-ज्यों मनुष्य की क्रियाओं का विस्तार हुआ त्यों-त्यों अंधविश्वासों का जाल भी फैलता गया और इनके अनेक भेद-प्रभेद हो गए. अंधविश्वास सार्वदेशिक और सार्वकालिक हैं. विज्ञान के प्रकाश में भी ये छिपे रहते हैं. अभी तक इनका सर्वथा उच्चाटन नहीं हुआ है. भारत में अंधविश्वास की जड़ें बहुत गहरी हो चुकी हैं.

परंपरा कानून, प्रथा, कहानी का वह संग्रह है, जो मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित किया जाता है. जैसे ही हम भारत देश की बात करते हैं जो चीज सबसे पहले हमारे दिमाग में आती है वो है हमारे देश की परंपराएं जो कि सदियों से चलती आ रही हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी हम उसका निर्वाह कर रहे हैं. हमारे देश में अनेक धर्म एवं जातियाँ हैं और हर धर्म एवं जाति की कुछ अलग रीति और अलग व्यवधान हैं और हर धर्म एवं जाति बिना किसी सवाल के हर उस नियम का पालन करती है. परंपरा-प्रणाली में किसी विषय या उप विषय का बिना ज्ञान के और बिना किसी परिवर्तन के एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ियों में संचारित होता रहता है.

जब हम अपने भारतीय संस्कृति की बात करते हैं तो यहाँ रीति-रिवाज और परंपरा का अलग महत्व है. जैसे सुबह उठकर अपने हाथों को देखना, धरती पर पैर रखने से पहले धरती माँ को प्रणाम करना, सूर्यग्रहण के समय घर से बाहर ना निकलना, सूर्योदय से पहले जागना आदि. किन्तु कब ये परंपराए हमारी कमजोरी बन जाती हैं इसका हमें पता नहीं चलता और कब हम इसका वास्तविक महत्व भूल कर उसे अंधविश्वास का रूप दे देते हैं इसका खुद हमें आभास नहीं होता किन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी होती है.

अंधविश्वास का अर्थ होता है विचारहीन विश्वास, जिसमें हम बिना कुछ सोचे-समझे बस किसी नियम को मानते चले जाते हैं या किसी इंसान की हर बात को अनुसरित करते हैं हमारी भारतीय संस्कृति में भगवान एवं पूजा का बहुत महत्व है मगर कब उस पूजा में लोग ये भूल जाते हैं कि ईश्वर पे आस्था रखना अलग है और ईश्वर के नाम पे लोगों को बांधना गलत है. लोग ऐसी आस्था में किसी इंसान को ही भगवान बना लेते हैं और उसके बातों में ऐसे उलझ जाते हैं कि उनको खुद पता नहीं होता और उसका नतीजा होता है खुद का और अपने परिवार का नाश. ऐसे ढोंगी बाबा, लोगों की कमजोरी को जानकर उनसे किसी भी तरीके का काम करवाते हैं. लोग वो करते हैं और अगर कोई ये ना करे तो उससे नास्तिक माना जाता है और उसका बहिष्कार किया जाता है.

अंधविश्वास में आकर मनुष्य अपनी चेतना गंवां देता है और उसे लगता है जो परंपरा में है बस वही सही है और उसी का पालन होना चाहिए. चाहे इससे किसी की जान क्यूं ना चली जाए. इंसान जब आस्था की रोशनी त्यागकर अंधविश्वास के अंधेरे में भटक जाता है तो आस्था भी शर्मसार हो जाती है. जब विश्वास ही अंधविश्वास बन जाए और परंपरा नासूर तो उसे छोड़ना ही बेहतर है. हमारे देश में परंपरा के नाम पर कुछ ऐसे खेल एवं रीतियां सैकड़ों सालों से चलती आ रही हैं जिसमें हर वर्ष ना जाने कितने लोगों की जान जाती है किन्तु ना कोई उसे रोकता है ना ही कोई उसके पीछे का कारण जानना चाहता है, उदाहरण स्वरूप किसी गांव में खुद को कोड़े से मारना, पैदल नंगे पैर यात्रा करना, पुरुषों का सांड से मल्लयुद्ध जिसमें ना जाने कितनों की जान जाती है, भीषण गर्मी में भी निर्जला व्रत सांड मल्लयुद्ध करना चाहे जान क्यूं ना चली जाए, किसी को डायन मानकर मार देना, किसी धर्मगुरु के प्रति अंधसमर्पण करना, मुहर्रम में खुद को मारना एवं एक-दूसरे में युद्ध करना जो कि लड़ाई एवं मौत का कारण बन जाता है, शारीरिक एवं आर्थिक रूप से सक्षम ना होते हुए भी किसी यात्रा पे जाना और ये कहना कि भगवान ने चाहा तो पंहुचेंगे वरना मौत ही सही.

किसी कार्य में सफल न होने पे खुद को दोष ना देकर भगवान को दोष देना और उसके लिए अंधविश्वास बन जाना, और कई ऐसे उदाहरण हैं.

चिंता की बात यह है कि अंधविश्वास ऐसा कुंठित और जटिल रोग है कि बार-बार सुनते रहने से और लोगों के ज़ोर डालने से ये सिर्फ उन लोगों में नहीं है जो कम पढ़े-लिखे या जो धर्म को मानने वाले हैं बल्कि ये आज के मॉडर्न लोगों को भी प्रभावित कर देता है जैसे कि अगर किसी का कुछ काम सफल ना हुआ हो तो उसको ये विश्वास दिलाना की उसके ग्रह में दोष है या उससे अमुक कार्य करना चाहिए या अमुक पूजा करनी चाहिए किसी ढोंगी बाबा को दान देना चाहिए आदि, जैसे किसी पढ़ी-लिखी महिला को भी मांगलिक कहला कर उसकी शादी पेड़ से करवाना. ये बातें इतनी प्रभावशाली होती हैं कि इंसान भविष्य में होने वाले किसी अप्रिय घटना के डर से सारी बातें भूल जाता है और जो कहे तो कर जाता है.

जब हम अंधविश्वास की बात करते हैं तो हमेशा ही धार्मिक या रूढ़िवादी अंधविश्वास की सोचते हैं, हमें लगता है कि अंधविश्वास पुराने दौर की मान्यताओं और आधुनिकता के प्रति अज्ञान के कारण पैदा होता है. लेकिन अंधविश्वास का अर्थ अगर बिना सोचे-समझे किसी बात पर पूरी तरह भरोसा कर लेना है और उसके खिलाफ किसी अन्य तर्क या प्रमाण को नकार देना है तो ऐसा सिर्फ धर्म और रूढ़ियों तक तो सीमित नहीं रहता, ये तो कई आधुनिक और सेक्यूलर चीजों या लोगों के प्रति भी अंधविश्वास या अंधश्रद्धा होता है. किसी ढोंगी बाबा के प्रति श्रद्धा गलत है तो किसी फिल्म स्टार या खिलाड़ी या नेता का अंधभक्त होना भी गलत है. विज्ञापन तो हमें अंधविश्वासी बनाने का धंधा है, गोरा करने वाली क्रीम, वजन कम करने की दवा, दूसरों पे अच्छे दिखने वाले कपड़े, सफाई का सामान, जिंदगी बदल देने वाले उपाय जो सब दिखाये जाते हैं और लोग उससे मानते हैं और उसके पीछे लग जाते हैं किसी नेता की बात को सुनकर दंगा करना, उसकी कही हुई हर बात पे भरोसा करना यह भी अंधविश्वास है. किसी फिल्मस्टार के लिए दीवाना होना, उसकी फिल्म के चरित्र जैसा खुद को बनाना भी तो अंधविश्वास है.

अत: हम ये भी नहीं कह सकते कि जो परंपरा को मानते हैं वो अंधविश्वासी हैं या अंधविश्वासी लोग ही परंपरा को मानते हैं किन्तु कब परंपरा को अपने जीवन का आधार मानते हुए कब इंसान अंधविश्वासी बन जाता है पता नहीं चलता सही तो यही होगा की हम बदलते समय के साथ खुद को उसी रूप में ढालें किन्तु अपने जीवन में सदियों से चलती आ रही परंपरा के महत्व को समझते हुए उसको जरूरत के हिसाब से लागू रखें. इंसान से नियम बने हैं ना कि नियम से इंसान इस बात को समझ कर हर नियम एवं परंपरा की जरूरत को समझ कर काम करना चाहिए.

अंधविश्वासों का वर्गीकरण

अंधविश्वासों का सर्वसम्मत वर्गीकरण संभव नहीं है. इनका नामकरण भी कठिन है. पृथ्वी शेषनाग पर स्थित है, वर्षा, गर्जन और बिजली इंद्र की क्रियाएँ हैं, भूकंप की अधिष्ठात्री एक देवी है, रोगों के कारण प्रेत और पिशाच हैं, इस प्रकार के अंधविश्वासों को प्राग्वैज्ञानिक या धार्मिक अंधविश्वास कहा जा सकता है. अंधविश्वासों का दूसरा बड़ा वर्ग है मंत्र-तंत्र! इस वर्ग के भी अनेक उपभेद हैं. मुख्य भेद हैं रोग निवारण, वशीकरण, उच्चाटन, मारण आदि. विविध उद्देश्यों की पूर्ति के लिए मंत्र प्रयोग सर्वत्र प्रचलित था. मंत्र द्वारा रोग निवारण अनेक लोगों का व्यवसाय था. विरोधी और उदासीन व्यक्ति को अपने वश में करना या दूसरों के वश में करवाना मंत्र द्वारा संभव माना जाता था. उच्चाटन और मारण भी मंत्र के विषय थे.

जादू-टोना, शकुन, मुहूर्त, मणि, ताबीज आदि अंधविश्वास की संतति हैं. इन सबके अंतस्थल में कुछ धार्मिक भाव हैं, परंतु इन भावों का विश्लेषण नहीं हो सकता. इनमें तर्कशून्य विश्वास है. मध्य युग में यह विश्वास प्रचलित था कि ऐसा कोई काम नहीं है जो मंत्र द्वारा सिद्ध न हो सकता हो. असफलताएँ अपवाद मानी जाती थीं. इसलिए कृषि रक्षा, दुर्गरक्षा, रोग निवारण, संतति लाभ, शत्रु विनाश, आयु वृद्धि आदि के हेतु मंत्र प्रयोग, जादू-टोना, मुहूर्त और मणि का भी प्रयोग प्रचलित था.

हम यहां पर कुछ ऐसे अंधविश्वास का जिक्र करना चाहते हैं जो पता नहीं कब परंपरा बन गयी. पशु बलि प्रथा को यदि देखा जाए तो पहले देवताओं को प्रसन्न करने के लिए बलि का प्रयोग किया जाता है. बलि प्रथा के अंतर्गत बकरा, मुर्गा या भैंसों की बलि दिए जाने का प्रचलन है. सवाल यह उठता है कि क्या बलि प्रथा हिन्दू धर्म का हिस्सा है ?

विद्वजनों का मानना है कि हिन्दू धर्म में लोक परंपरा की धाराएं भी जुड़ती गईं और उन्हें हिन्दू धर्म का अभिन्न हिस्सा बनाते जाया गया. जैसी बरगद का वृक्ष से असंख्य जड़ें लिपटकर अपना अस्तित्व बना लेती हैं लेकिन वे लताएं वृक्ष नहीं होती. उसी तरह वैदिक आर्य धर्म की छत्रछाया में अन्य परंपराओं ने भी जड़े फैला लीं. इन्हें कभी रोकने की कोशिश नहीं की गयी. ग्रह-नक्षत्र पूजा, वशीकरण, सम्मोहन, मारण, ताबीज, इसी प्रकार स्तंभन, काला जादू आदि सभी का वैदिक मत अनुसार निषेध है. ये सभी तरह की विद्याएं स्थानीय परंपरा का हिस्सा हैं.

टोने-टोटके से व्यक्ति और समाज का अहित ही होता है और सामाजिक एकता टूटती है. ऐसे कर्म करने वाले लोगों को जाहिल माना जाता है. अथर्ववेद में बताया गया है कि जिस घर में मूर्खों की पूजा नहीं होती है, बल्कि विद्वान और संत लोगों का उचित मान-सम्मान किया जाता है, वहां समृद्धि और शांति होती है. हमारा वेद कर्मप्रधान सफल जीवन जीने की सीख देता है.

अत: हम कह सकते हैं कि परंपराएं एवं अंधविश्वास एक दूसरे के पूरक भी होते हैं. कब अंधविश्वास परंपरा बन जाए अथवा परंपरा अंधविश्वास बन जाए यह कहना बहुत ही मुश्किल होता है. सबसे बड़ी बात है कि शिक्षित समाज में सोचने का स्तर उच्च होता है जिसके कारण निर्णय भी सोच समझ कर लिया जाता है. अशिक्षित समाज सदैव परंपराओं तथा अंधविश्वासों को ढोने का काम करता है. हालांकि यह भी देखा गया है कि आज भी समाज की आड़ में कई अवैध परंपराओं को समाज द्वारा ढोया जाता है.

सबसे आवश्यक है कि परंपराओं को समझे बिना आंख बंद कर अपनाना ही अंधविश्वास है तथा बिना सोचे समझे अंधविश्वास पीछे चलना ही परंपरा है. हमें इन दोनों विषय को एक साथ समझकर समाज में जागरुकता फैलाने की आवश्यकता है.

सोनम कुमारी
क्षे. का., पटना

क्या जटिलताओं में उलझी हुई है?

संस्कृति को परिभाषित करना अथवा संस्कृति के विषय में कुछ कहना स्वयं में एक जटिल कार्य है और जब भारतीय संस्कृति के विषय में बात हो तो वह अपनी विषमताओं को समेटे हुए निसंदेह अद्भुत है. फिर भी भारत एक है. प्राचीन भारतीय विद्वानों ने इसे महान एवं विश्व गुरु घोषित किया है. भारत को महान एवं विश्व गुरु बताते हुए 'मैं अखिल विश्व का गुरु महान' कविता में पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेई भारत मुक्ति मार्ग का अन्वेषक बताते हुए कहते हैं-

मैं अखिल विश्व का गुरु महान,
देता विद्या का अमर दान,
मैंने दिखलाया मुक्ति मार्ग
मैंने सिखलाया ब्रह्म ज्ञान

भारतीय संस्कृति के विषय में कहा जाता है कि भारतीय संस्कृति विश्व की अत्यंत प्राचीन और श्रेष्ठ संस्कृति है. यह लौकिकता, आधिभौतिकता और भोगवाद की बजाय अध्यात्मवाद और आत्मतत्व की भावना पर केंद्रित है. जिसका मूल लक्ष्य शांति, सहिष्णुता, एकता, सत्य, अहिंसा और सदाचरण जैसे मूलतत्व हैं.

भारतीय संस्कृति परिवर्तनशील रही है लेकिन कभी विलुप्त नहीं हुई. संस्कृति में कई उतार चढ़ाव आए, कितनी ही संस्कृतियों का समागम हुआ लेकिन भारतीय संस्कृति इन सबका समन्वय कर चलती रही. भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता इसकी निरंतरता है. संस्कृति सब पर लागू होती है किन्तु परंपरा धार्मिक और वंशज हो सकती है.

नि:संकोच यह कह सकते हैं भारतीय संस्कृति एवं परंपरा जटिलताओं में उलझी हुई है. इक्कीसवीं शताब्दी की पीढ़ी दो दौरों से गुजर रही है, जहाँ एक ओर विरासत में मिली धार्मिक, सांस्कृतिक मान्यताएँ, रीतिरिवाज एवं परंपराएँ हैं वहीं दूसरी ओर आधुनिकता का प्रश्न है. आधुनिकता उन्हें अंधविश्वास की बेड़ियों में जकड़ी पुरातन परंपराओं को तोड़ने और आधुनिकता को अपनाने को प्रेरित करती है वहीं पुरातन परंपरा स्वयं को ढोने को मजबूर करती है. यह जो पीढ़ी है दोगली में उलझी हुई है और समझ नहीं पा रही कि क्या उचित है और क्या अनुचित?

एक ओर विज्ञान एवं तकनीक ने इतनी वृद्धि कर ली है कि आधुनिक मानव के सोचने का तरीका बदल गया है. वह किसी भी बात को पहले विज्ञान के नज़रिये से सोचता है फिर निष्कर्ष पर पहुँचता है. जातिप्रथा, रूढ़िवादी सोच के लिए आधुनिक मानव के मन में कोई स्थान नहीं है. लेकिन कभी-कभी पुरातन सोच एवं परंपराएँ आकर उसकी उड़ान पर लगाम लगा देती हैं एवं उस पर हावी होने लगती हैं. विश्व में सर्वश्रेष्ठता की बात तो हम भारतीय संस्कृति में करते हैं किन्तु कहीं-कहीं इसकी संस्कृति में विकृति आ जाती है. परंपराएँ समय के साथ बदलकर या तो परिष्कृत हो जाती हैं या दूषित हो जाती हैं.

एक ऐसी ही पुरातन परंपरा एवं प्रथा जिसे देवदासी प्रथा कहा जाता है. इसके विषय में ऐसा माना जाता है कि छठी सातवीं शताब्दी में कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु आदि दक्षिण प्रदेश में यह बहुप्रचलित थी. इस प्रथा के अंतर्गत देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिए सेवक के रूप में युवा लड़कियों को मंदिरों में समर्पित करना होता था तथा मंदिरों के पुजारियों द्वारा उनका शोषण किया जाता था. जबकि पिछले 20 सालों से पूरे देश में इस प्रथा का प्रचलन बंद हो चुका है. कर्नाटक सरकार ने 1982 में और आंध्र प्रदेश सरकार ने 1988 में इस प्रथा को गैरकानूनी घोषित कर दिया था, लेकिन राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अनुसार वर्ष 2013 तक लगभग 4,50,000 देवदासियाँ थीं. 21वीं सदी में मानव समाज को शर्मसार करने वाली यह प्रथा आज भी विद्यमान है.

विधवा होना भारतीय संस्कृति में एक अभिशाप माना जाता है. भारतीय विधवा का जीवन नरक समान हो जाता है. हिन्दी के छायावादी प्रमुख कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' संपूर्ण आधुनिक काल में भी महत्वपूर्ण कवि हैं. निराला को कुछ लोग आधुनिक युग का कबीर भी कहते हैं. निराला ने अन्याय और अत्याचार सहती,

पराधीनता की जंजीरों में जकड़ी, भारत में विधवा की दयनीय स्थिति का वर्णन अत्यंत मार्मिक शब्दों में किया है -

वह इष्टदेव के मंदिर की पूजा सी
वह दीपशिखा सी शांत भाव में लीन
वह क्रूर काल तांडव की, स्मृति रेखा सी
वह टूटे तरू की, छूटी लता सी दीन
दलित भारत की ही विधवा है

निराला ने अपनी 'भारत की विधवा' कविता में भारत को 'दलित' कहा है और 'दलित' शब्द भारत में सामाजिक निम्न सोच के कारण कहा है एवं विधवा की भारत में दयनीय स्थिति, मानसिक पीड़ा एवं उसके प्रति हीन भावना का चित्रण किया है. यह कविता 1923 में लिखी गई थी जब भारत में विधवा स्त्री के लिए कठोर नियम बना दिये जाते थे और उसे उन नियमों का पालन करना होता था. किन्तु वर्तमान में विधवा स्त्रियों की दशा में बदलाव आया है. गाँवों में भी स्थिति कुछ हद तक बदल गई है. विधवा पुनर्विवाह जैसे कानूनों ने समाज में एक नया परिवर्तन लाया है.

धार्मिक जटिलता भारत की सबसे बड़ी समस्या है. यहाँ विभिन्न धर्म एवं संप्रदाय को मनाने वाले लोग निवास करते हैं. जिनकी अपनी परंपराएँ तथा अपने रीतिरिवाज़ हैं. जहाँ धार्मिक विवाद भी उत्पन्न होता है, वहीं एक दूसरे के धर्म का आदर भी किया जाता है. कवि हरिवंश राय बच्चन के शब्दों में जहाँ धार्मिक संस्थान मनुष्यों को एक दूसरे से अलग करते हैं वहीं मधुशाला उन्हें एक करती है-

मुसलमान और हिन्दू हैं दो, एक मगर उनका प्याला,
एक मगर उनका मदिरालय, एक मगर उनकी हाला,
दोनों रहते एक न जब तक, मस्जिद मंदिर में जाते,
बैर बढ़ाते मस्जिद मंदिर, मेल कराती मधुशाला.

कितनी विडंबना का विषय है कि धार्मिक मतभेद को पूजनीय स्थान नहीं ख़त्म कर पा रहे वहीं एक मदिरालय सभी धार्मिक दूरियों को मिटाकर एक कर रहा है.

'जातिप्रथा' भारत में पाई जाने वाली ऐसी कुरीति है जिसका समाधान निकालने में सरकार भी असफल है. ऊँच-नीच, जाति-पाति से ग्रसित भारत देश एक ऐसे दलदल में फंसा हुआ है जहाँ से चाहकर भी वह बाहर नहीं निकल पा रहा है. यह सबसे अधिक हास्यास्पद तब लगा जब सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय दंड संहिता की धारा 377 के तहत 6 सितंबर, 2018 को समलैंगिक विवाह को अनुमति प्रदान की एवं इसका भारतीयों द्वारा हार्दिक स्वागत किया गया. किन्तु अभी भी अंतर्जातीय विवाह को भारतीय समाज मंजूरी नहीं देता एवं हीन दृष्टि से देखता है.

भारतीय गाँवों में यह जातिवाद की भावना अपनी जड़ों को जमाए हुए है. खाप पंचायतें इसका जीता जागता उदाहरण है जहाँ दूसरी जाति में विवाह करने पर कड़े कानून हैं यहाँ तक कि विवाहित जोड़ों को बेरहमी से मार दिया जाता है.

छुआछूत की भावना भारतीय संस्कृति को मनुवादियों की देन कहा जाता है. जहाँ किसी अनुसूचित जाति के व्यक्ति को सवर्ण के सामने आने का भी अधिकार नहीं था. इन लोगों के घर गाँव से कहीं बाहर होते थे. परंपरा वह होती है जो एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी से ग्रहण करती है. आधुनिक युवाओं ने इस पुरातन परंपरा को तोड़ा है. शहरों में यह भेदभाव की भावना समाप्त हुई है, किन्तु भारत के अधिकतर गाँवों की स्थिति ऐसी ही है जहाँ दलित समुदाय के लोगों की स्थिति सोचनीय है.

भारतीय संस्कृति एवं परंपरा पर आधुनिकता का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है. यहाँ की वेशभूषा, खानपान, भाषा आदि सभी बदल गई हैं. भारतीय समाज के लोकनृत्य, गान, भाषा और व्यंजन में कई राज छिपे हुए हैं. आज स्थिति ऐसी है कि स्थानीय लोग अपनी संस्कृति एवं इतिहास को भूलते जा रहे हैं. आने वाले समय में हम अपनी स्थानीय संस्कृति, सभ्यता, भाषा, धर्म के विषय में किताबों में पढ़ेंगे. लेकिन आधुनिक विचारों के आने से समाज में कुरीतियों का अंत हुआ है और एक स्वस्थ व्यवस्था का निर्माण हुआ है.

भारतीय संस्कृति एवं परंपरा जटिल एवं उलझी हुई तो है किन्तु समय में बदलाव के कारण खुद को उसके अनुरूप समन्वित कर प्रगतिशील हो रही है. अब वह विविध भेदभावों से ऊपर उठकर सबका साथ सबका विकास की बात करती है.

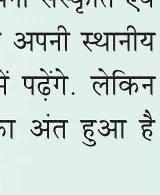

डॉ. मनीषा
क्षे. का., महेसाणा

त्योहार एवं समारोह: आयोजनों की विविधता

भारत विभिन्न संस्कृतियों और धर्मों की एक पवित्र भूमि है. यहां लगभग प्रतिदिन ही एक त्योहार होता है जो भारत की सांस्कृतिक सभ्यता को प्रदर्शित करते हैं. भारत के सभी राज्यों की कुछ विशेष विशेषताएं हैं, जो त्योहारों के माध्यम से प्रदर्शित होती हैं. प्रत्येक त्योहार को मनाने का एक विशेष ढंग होता है, जो उस राज्य की कला, संस्कृति एवं सभ्यता को समाज के सामने प्रस्तुत करता है. भारत के अधिकांश त्योहार पौराणिक कहानियों, उत्सवों और लोक कलाओं से जुड़े हुए हैं. कुछ त्योहार तो साल के मौसम का उद्घाटन करते हैं. सर्दी, गर्मी, बरसात, बसंत आदि ऋतुएं यहां कई त्योहार साथ लाते हैं. जबकि त्योहार किसी प्रदेश या समुदाय विशेष द्वारा मनाया जाता है.

भारतीय पर्वों में कितनी भिन्नता है उसका एक उदाहरण नव वर्ष के आयोजन से लिया जा सकता है. भारत के विभिन्न हिस्सों में नव वर्ष अलग-अलग तिथियों को मनाया जाता है. प्राय: ये तिथि मार्च और अप्रैल के महीने में पड़ती हैं. पंजाब में नव वर्ष बैशाखी नाम से 13 अप्रैल को मनाया जाता है. सिख नानक शाही कैलेंडर के अनुसार 14 मार्च होला मोहल्ला नया साल होता है. इसी तिथि के आसपास बंगाली तथा तमिल नव वर्ष भी आता है. तेलगु का नया साल मार्च-अप्रैल के बीच आता है. आंध्र प्रदेश में इसे उगादी के रूप में मनाते हैं. यह चैत्र महीने का पहला दिन होता है. केरल में विशु यानि 13 व 14 अप्रैल को नव वर्ष के रूप में मनाया जाता है. तमिलनाडु में पोंगल 15 जनवरी को नए साल के रूप में आधिकारिक तौर पर भी मनाया जाता है. कश्मीरी कैलेंडर नवरेह 19 मार्च को होता है. महाराष्ट्र में गुड़ी पड़वा के रूप में नव वर्ष मार्च-अप्रैल माह में मनाया जाता है. कन्नड़ का नया वर्ष उगाडी चैत्र माह के पहले दिन मनाया जाता है. सिंधी उत्सव चेटी चंद, उगाड़ी और गुड़ी पड़वा एक ही दिन मनाया जाता है. मदुरै में चैत्र महीने में चित्रैय तिरूविजा नए साल के रूप में मनाया जाता है. मारवाड़ी नया साल दीपावली के दिन होता है. गुजराती नया साल दीपावली के दूसरे दिन होता है. इस दिन जैन धर्म का भी नववर्ष होता है. बंगाली नया साल पोहेला बैसाखी 14 या 15 अप्रैल को आता है. बांग्लादेश में भी इसी दिन नया साल होता है.

मानव जीवन विविधताओं से भरा हुआ है. इन परिस्थितियों में त्योहार मानव जीवन में सुखद परिवर्तन लाते हैं तथा उसमें हर्षोल्लास व नवीनता का संचार करते हैं. संस्कृत के महाकवि कालिदास ने मनुष्य को उत्सव प्रिय कहा है, भारत एक ऐसा देश है जहां हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन आदि सभी धर्मों के लोग एक साथ निवास करते हैं. कुछ त्योहारों को राष्ट्रीय स्तर पर मनाया जाता है, जबकि कुछ क्षेत्रीय स्तर पर मनाये जाते हैं. पद्धति और धर्म के अनुसार त्योहारों को अलग-अलग वर्गों में वर्गीकृत किया गया है.

हिन्दू त्योहार: विभिन्न हिन्दू त्योहार मनाने की अपनी एक खास पद्धति होती है. देवी-देवताओं को गंगाजल चढ़ाना, व्रत रखना, जल्दी सुबह स्नान करना, दान करना, कथा सुनना, होम, आरती आदि बहुत कुछ जिसके द्वारा पूजा की क्रिया संपन्न होती है. किसी जाति, उम्र, और लिंग की परवाह किये बिना हिन्दू धर्म के सभी लोग अपना त्योहार मिल-जुलकर मनाते हैं. हिन्दू त्योहारों की तारीख को हिन्दू कैलेंडर की तारीखों के अनुसार तय किया जाता है. कुछ हिन्दू त्योहारों को ऐतिहासिक पौराणिक कथाओं के रुप में मनाया जाता है तो कुछ मौसम के बदलने पर और कुछ पर्यावरण को स्वच्छ रखने के लिए. कई प्राचीन और पवित्र धार्मिक मूलग्रंथों यथा भागवत गीता, महाभारत, रामायण, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद आदि की वजह से हिन्दू धर्म में अनेकों मान्यताएँ हैं और देवी-देवताओं के जन्मदिन को भी बहुत उत्साह के साथ मनाया जाता है.

इस्लामिक त्योहार: इस्लामिक त्योहार पूरे विश्व के साथ भारत में भी मुस्लिमों द्वारा पूरे उत्साह के साथ मनाते हैं. इन पर्वों को इस्लामिक कैलेंडर के अनुसार पूरे जुनून और समर्पण के साथ मनाया जाता है. कुछ महत्वपूर्ण इस्लामिक पर्व यथा रमजान, ईद-ए-मिलाद, मुहर्रम, बकरीद आदि खास तरीके से मस्जिदों में दुआ माँग कर, दावत देकर और एक-दूसरे को बधाई देकर मनाया जाता है. लोग पूरी रात एक-दूसरे के साथ मिलकर जश्न मनाते हैं. इस्लाम में शहादह (भरोसा), सलाअ (प्रार्थना), ज़काह (दान), रोजा (व्रत) और हज़ (तीर्थस्थान) पास पाँच महत्वपूर्ण स्तंभ हैं.

सिख त्योहार: कुछ हिन्दू त्योहारों को सिखों द्वारा भी मनाया जाता है. सिख धर्म के समस्त नियम पवित्र पुस्तक 'गुरू ग्रंथ साहिब' में संकलित हैं. इसका संकलन प्रथम सिख गुरु, गुरु नानक द्वारा किया गया था. बाद में गुरु अर्जुनदेव ने इसे संपादित किया. सिख धर्म में 'गुरु ग्रन्थ साहिब' को देवताओं की जगह रखा जाता है और त्योहार मनाते समय इसे पालकी में रखकर सार्वजनिक जूलुस निकाला जाता है. सिख लोग परमात्मा से जुड़ने व उत्सव मनाने के दौरान गुरुबानी का गान, पवित्र पुस्तक को पढ़ना व गीत-संगीत करते हैं व दस सिख गुरुओं के जीवन और उनकी दी गयी सीखों को याद करते हैं.

जैन पर्व: जैन धर्म के लोग बहुत सारे रीति-रिवाज़ और धार्मिक रस्मों को त्योहार के रुप में मनाते हैं. इनके रीति-रिवाज़ विभिन्न तरीकों

में मूर्ति पूजा से संबंधित है और तीर्थंकरों के जीवन की घटनाओं से संबंधित है. इनके रीति-रिवाज़, कार्य और क्रिया में विभाजित हैं. जैन श्वेताम्बर के अनुसार छः अनिवार्य कर्तव्य होते हैं जो कि चतुर्विंशंती-स्तव (तीर्थंकरों की स्तुति करना), कयोत्सरगा (ध्यान), प्रतिक्रमण (पिछले बुरे कामों का प्रायश्चित), प्रत्याख्यना (किसी भी चीज का त्याग करना), समयका (शांति और ध्यान), वंदन (गुरुजनों का आदर करना आत्मसंयमी बनना) है. जैन दिगम्बर के अनुसार छः कर्तव्य हैं जो दाना (दान), देवपूजा (तीर्थंकरों की पूजा), गुरु उपस्थी (गुरुजनों का आदर करना व आत्मसंयमी बनना), संयम (विभिन्न नियमों से खुद पर काबू रखना), स्वाध्याय (धार्मिक ग्रंथों को पढ़ना), तापा (तपस्या) है.

ईसाई पर्वः ईसाई धर्म के लोग क्रिसमस, ईस्टर, गुड फ्राईडे आदि त्योहार बहुत ही उत्साह के साथ मनाते हैं. भारत में तो अन्य धर्मों के लोग भी क्रिसमस मनाते हैं. गोवा, जहाँ बहुत पुरानी व दर्शनीय अनेक चर्च मौजूद हैं, बहुत ही धूमधाम से क्रिसमस मनाते हैं. इस दौरान ईसाई लोग दावत देते हैं, प्रार्थना करते हैं और जुलूस निकालकर खुशियाँ मनाते हैं.

बौद्ध पर्वः बौद्ध धर्म के लोग भगवान बुद्ध और बोधिसत्व की पूजा करते हैं. ऐसा माना जाता है कि बौद्ध धर्म भगवान बुद्ध द्वारा शुरु किया गया और उन्होंने अपने भक्तों को सलाह दी कि अपने बंधन को मजबूत करने के लिए एक-दूसरे के संपर्क में रहें. ये अपने पर्व को मनाने के लिए ऐतिहासिक वस्तुओं की पूजा करते हैं. इनका उत्सव ज्यादा धार्मिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक माना जाता है.

त्योहारों का महत्वः जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में नित नए अनुसंधान एवं प्रयोगों के माध्यम से मनुष्य बहुआयामी विकास की ओर अग्रसर हुआ है. इसके बावजूद मनुष्य का सर्वांगीण विकास तब तक संभव नहीं है जब तक उसमें बौद्धिक विकास के साथ भावनात्मक विकास न हो. हमारे देश के त्योहार व पर्व हमारे भावनात्मक विकास में सदैव सहभागी रहे हैं. ये त्योहार करुणा, दया, सरलता, आतिथ्य सत्कार, पास्परिक प्रेम एवं सद्भावना तथा परोपकार जैसे नैतिक गुणों का मनुष्य में विकास करते हैं.

कुछ त्योहारों का स्वरूप इतना व्यापक है कि इसमें पूरा देश सामूहिक रूप से भाग लेता है. वहीं कुछ त्योहार यथा बिहार का छठ, पंजाब की बैशाखी या तमिलनाडु का पोंगल आदि क्षेत्रीय होते हैं. प्रत्येक त्योहार में अपनी विधि व परंपरा के अनुसार समाज, देश तथा राष्ट्र के लिए कोई न कोई विशेष संदेश निहित होता है. भारत में विजयादशमी का पर्व जिस प्रकार असत्य पर सत्य की तथा अधर्म पर धर्म की विजय का संदेश देता है, वहीं रक्षाबंधन भाई-बहन के पवित्र प्रेम को

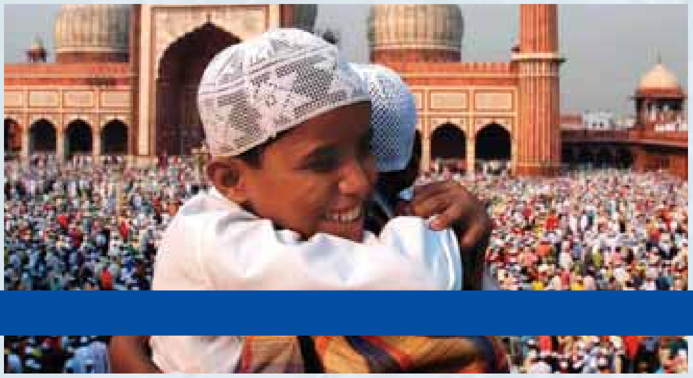

प्रगाढ़ करता है. इसी प्रकार रंगों का त्योहार होली हमें आपसी कटुता व वैमनस्य को भुलाकर अपने शत्रुओं से भी प्रेम करने का संदेश देता है.

क्रिसमस संसार से पाप के अंधकार को दूर करने का तो ईद भाईचारे का संदेश देती है. इस प्रकार सभी त्योहारों के पीछे समाजोत्थान का कोई न कोई महान उद्देश्य अवश्य ही निहित होता है. इनसे लोग एक-दूसरे के करीब आते हैं और समाज से वैमनस्य घटता है. त्योहारों के अवसर पर दान देने, सत्कर्म करने की जो परंपरा है, उससे सामाजिक ताने-बाने को बनाए रखने में भी मदद मिलती है.

त्योहारों के आगमन से पूर्व मनुष्य संपूर्ण आलस्य व नीरसता को त्याग कर पूरे उत्साह के साथ त्योहारों की तैयारी करता है. दिवाली में हमारे यहां दिये जलाये जाते हैं और मिठाईयां बनायी जाती हैं तथा सबको बांटी भी जाती हैं. अंधकार पर प्रकाश की विजय को अधोरेखित करता यह त्योहार पूरे भारत में मनाया जाता है.

त्योहारों का आनंद और भी अधिक होता है जब परिवार के सभी सदस्य एक साथ त्योहारों में हिस्सा लेते हैं. इसके अतिरिक्त पारिवारिक संस्कार का बच्चों पर उत्तम प्रभाव पड़ता है.

हमारे कुछ राष्ट्रीय पर्व जैसे गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस, बाल दिवस, शिक्षक दिवस व गाँधी जयंती को सभी धर्मों, जातियों व संप्रदायों के लोग मिल-जुलकर खुशी से मनाते हैं.

आज इन त्योहारों की शुद्धता, पवित्रता व मूल भावना को बनाए रखने का दायित्व हम सब पर है. ये सभी त्योहार भारतीय संस्कृति के गौरव व पहचान हैं. हम सभी का यह कर्तव्य है कि इन त्योहारों की सादगी व पवित्रता बनाए रखें. अपने निजी स्वार्थों से उनकी छवि को धूमिल न करें. त्योहारों को मनाने की विधियों में जो विकृतियाँ यथा मदिरापान, जुआ खेलना, धार्मिक उन्माद, ध्वनि प्रदूषण व वायु प्रदूषण को बढ़ावा देना आदि आई हैं उन्हें शीघ्रातिशीघ्र समाप्त करना होगा. त्योहारों को उनकी मूल भावना के साथ मनाएँ ताकि देश व समाज में सुख-शांति में संवृद्धि हो सके.

सुनील प्रकाश पाल
क्षे. का., बेंगलूरु

पश्चिमी संस्कृति का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव

अर्थ : संस्कृति का क्षेत्र सभ्यता से कहीं व्यापक और गहन होता है. सभ्यता का अनुकरण तो किया जा सकता है परन्तु संस्कृति का अनुकरण नहीं किया जा सकता है. संस्कृति किसी भी देश, जाति और समुदाय की आत्मा होती है जिनके सहारे वह अपने आदर्शों एवं जीवन मूल्यों आदि का निर्धारण करता है. संस्कृति का साधारण अर्थ होता है - संस्कार, सुधार, परिष्कार, शुद्धि व सजावट इत्यादि. भारतीय प्राचीन ग्रंथों में संस्कृति का अर्थ संस्कार से ही माना गया है. कौटिल्य जी ने विनय के अर्थ में संस्कृति शब्द का प्रयोग किया है. भारतीय प्राचीन ग्रंथों में भी अँग्रेजी शब्द 'कल्चर' के समान संस्कृति शब्द का प्रयोग होने लगा है. संस्कृति का अर्थ हम भले ही कुछ निकाल लें किन्तु संस्कृति का संबंध मानव जीवन मूल्यों से ही होता है.

भूमिका : 'भारतीय संस्कृति' विश्व की सर्वाधिक प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृति है. इसे विश्व की सभी संस्कृतियों की जननी कहा गया है. जीने की कला हो या विज्ञान और राजनीति का क्षेत्र, भारतीय संस्कृति का सदैव विशेष स्थान रहा है. अन्य देशों की संस्कृतियाँ का समय की धारा के साथ-साथ बदलाव होता रहा है, किन्तु भारत की संस्कृति आदि काल से ही अपने परंपरागत अस्तित्व के साथ अजर-अमर बनी हुई है. विश्व के सभी क्षेत्रों और धर्मों की अपने रीति- रिवाजों, परंपराओं और परिष्कृत गुणों के साथ अपनी संस्कृति है परंतु भारतीय संस्कृति स्वाभाविक रूप से शुद्ध है जिसमें प्यार, सम्मान, दूसरों की भावनाओं का मान - सम्मान और अहंकार रहित व्यक्तित्व अंतर्निहित है. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्वों, जीवन मूल्यों और वचन पद्धति में एक ऐसी निरंतरता रही है, कि आज भी करोड़ों भारतीय स्वयं को उन मूल्यों एवं चिंतन प्रणाली से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं और इससे प्रेरणा प्राप्त करते हैं.

भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि में मानव कल्याण की भावना निहित है. यहाँ पर जो भी काम होते हैं वह **बहुजन हिताय और बहुजन सुखाय** की दृष्टि से होते हैं. यही संस्कृति भारतवर्ष की आदर्श संस्कृति है. हमारी संस्कृति की मूल भावना **'वसुधैव कुटुम्बकम'** के पवित्र उद्देश्य पर आधारित है अर्थात सभी सुखी हों, सभी निरोग हों, सबका कल्याण हो, किसी को भी दुख प्राप्त न हो ऐसी पवित्र भावनाएँ भारतवर्ष में सदैव प्राप्त होती रहें.

प्राचीनता : हमारी संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है. मध्य प्रदेश के भीमबेटका में पाये गए शैलचित्र, नर्मदा घाटी में की गई खुदाई तथा कुछ अन्य नृवंशीय एवं पुरातत्वीय प्रमाणों से यह सिद्ध हुआ है कि भारत की भूमि आदि मानव की प्राचीनतम कर्मभूमि रही है. सिंधु घाटी सभ्यता के विवरणों से यह साबित होता है कि आज के समय से लगभग पाँच हज़ार साल पहले उत्तरी भारत के एक बड़े भाग में एक उच्च कोटि की संस्कृति का विकास हो चुका था. इसी तरह से वेदों में परिलक्षित भारतीय संस्कृति ना सिर्फ प्राचीनता का एक प्रमाण है बल्कि वह भारतीय अध्यात्म और चिंतन की भी सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति है.

प्रभाव : किसी भी देश का अपना इतिहास होता है, परंपरा होती है. यदि किसी देश को शरीर मानें तो संस्कृति उसकी आत्मा है. किसी भी संस्कृति में आदर्श होते हैं, मूल्य होते हैं. इन मूल्यों की संवाहक संस्कृति होती है. भारतीय संस्कृति में चार मूल्य प्रमुख हैं : धर्म अर्थ, काम और मोक्ष.

सादा जीवन उच्च विचार हमारी संस्कृति की परंपरा समझी जाती थी परंतु आधुनिकता की अंधी दौड़ एवं पाश्चात्य संस्कृति का जीवन में प्रवेश होने से वह परिभाषा कहाँ चली गई पता ही नहीं चला. दोनों संस्कृतियों में से हमें क्या चुनना है यह हमारे ऊपर निर्भर है. वर्तमान में सामाजिक बदलाव को देखकर ऐसा लगने लगा है कि जैसे ना ही हमारी संस्कृति रह गई है और ना ही हमारी सभ्यता.

भारतीय संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति का बहुत अधिक प्रभाव पड़ रहा है. पाश्चात्य संस्कृति से भारतीय संस्कृति अच्छी मानी जाती है लेकिन हम लोग पाश्चात्य संस्कृति की चमक पर ध्यान देते हैं. हम यह नहीं सोचते कि हमारी संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति से बेहतर है. हमारी संस्कृति में महिलाओं का सम्मान किया जाता है. हमारी संस्कृति में यह माना जाता है कि हम सभी अपने धर्म का पालन करें, सोच-समझकर बोलें एवं अपना कर्म करते रहें जिससे हमें मोक्ष प्राप्त हो लेकिन हमारी संस्कृति पर पाश्चात्य संस्कृति का दुष्प्रभाव पड़ता जा रहा है. पाश्चात्य संस्कृति में व्यक्ति के संस्कार को प्रधान नहीं माना गया है उसमें व्यक्ति सिर्फ स्वयं को दिखने की कोशिश करता है. महान व्यक्तित्व

बनने के लिए अच्छे कपड़ों की नहीं बल्कि अच्छे संस्कार होने चाहिए.

पश्चिमी चकाचौंध के कारण हमें लगता है कि पाश्चात्य की हर चीज, हर बात अच्छी एवं अनुकरणीय है. एक कहावत है कि 'दूर के ढोल सुहावने लगते हैं' मतलब यह कि जो चीज हमारे पास नहीं होती है वह हमें अच्छी लगती है. यही बात पाश्चात्य संस्कृति पर भी लागू होती है. हम बिना यह सोचे कि वह चीज हमारे देश के लिए या हमारे लिए उपयोगी है या नहीं, उसे अपनाने के लिए हमेशा लालायित रहते हैं. चाहे वह उनके बोलने चालने का ढंग हो, कपड़े पहनने का तरीका हो या खान-पान का मामला हो, हम उनकी हर चीज का अनुसरण करने को तैयार रहते हैं.

नकारात्मक प्रभाव : पश्चिमी संस्कृति पर भारतीय संस्कृति के नकारात्मक प्रभाव निम्न हैं:

1. संयुक्त परिवार प्रथा भारतीय संस्कृति की नींव थी. पाश्चात्य संस्कृति के परिणामस्वरूप एकल परिवारों का चलन बढ़ गया है. संयुक्त परिवार नहीं होने से बच्चे अपने आप को अकेला महसूस कर बुरी आदतों का शिकार हो रहे हैं. बच्चे अपने माता-पिता को भी साथ में रखना पसंद नहीं कर रहे हैं इस वजह से वृद्धाश्रमों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है.
2. हम लोग पाश्चात्य पहनावे को भी अपनाने में अपनी शान समझते हैं. जो कपड़े उनके यहाँ पहने जाते हैं वह हमारे यहां स्टेटस सिंबल बन जाते हैं. ऐसे पहनावे का क्या लाभ जिसमें हम खुद को सहज न महसूस करें.
3. जंक फूड सेहत के लिए कितना नुकसानदायक होता है, यह हम सब को ज्ञात है किन्तु इसके बावजूद भी हम लोग जंक फूड का सेवन कर रहे हैं.

सकारात्मक प्रभाव : पश्चिमी संस्कृति पर भारतीय संस्कृति के सकारात्मक प्रभाव निम्न हैं:

1. हमारे समाज की सामाजिक कुप्रथाएँ जैसे कि कन्या भ्रूण हत्या, बालविवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा एवं दहेज इन कुप्रथाओं पर पाश्चात्य संस्कृति के कारण ही थोड़ा अंकुश लग सका है.'
2. पश्चिमी सभ्यता से हम प्रतिस्पर्धात्मक दुनिया में कदम रख पाए हैं. अब हम भारतीय भी बिना संकोच आगे बढ़ रहे हैं.

3. महिलाओं के प्रति सम्मान की भावना बढ़ी है. महिलाएं घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर खुली हवा में सांस ले पा रही हैं.
4. हमें पश्चिमी सभ्यता की तरह यातायात नियमों का कड़ाई से पालन करना होगा ताकि अपघातों की संख्या में कमी लाई जा सके.
5. हमें उनकी तरह ही स्वच्छता का खयाल रखते हुए सार्वजनिक स्थानों पर गंदगी फैलाने से अपने आप को रोकना होगा.
6. पाश्चात्य सभ्यता के लोगों की तरह बिजली और पानी की बचत करना सीखना होगा.

आज तक का इतिहास देखते हुये यह ही लगता है कि हमने west का best न लेकर west का waste ही लिया है. पाश्चात्य सभ्यता ने हम पर किसी भी चीज को अपनाने को लेकर दबाव नहीं बनाया है. यह हमारे ऊपर है कि हम उनसे क्या लेते हैं BEST या WASTE.

उपसंहार : परिवर्तन प्रकृति का नियम है, लेकिन हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि यह हमारे देश को पतन की ओर ना ले जाए. हमारे परिवर्तन का मतलब सकारात्मक होना चाहिए जो हमें अच्छाई से अच्छाई की ओर ले जाए जिससे हमारी भारतीय संस्कृति की रक्षा की जा सके. अगर हमारी संस्कृति ही नहीं रही तो हम स्वयं अपना अस्तित्व ही खो देंगे. संस्कृति के बिना समाज में विसंगतियाँ फैलने लगेंगी.

भारतीय संस्कृति एक महान जीवन धारा है जो प्राचीनकाल से सतत प्रवाहित है. इस तरह से भारतीय संस्कृति स्थिर एवं अद्वितीय है जिसके संरक्षण की ज़िम्मेदारी वर्तमान पीढ़ी पर है. उसकी उदारता और समन्वयवादी गुणों ने अन्य संस्कृतियों को समाहित तो किया है किन्तु अपने अस्तित्व के मूल को सुरक्षित रखा है. सर्वांगीणता, विशालता, उदारता और सहिष्णुता की दृष्टि से अन्य संस्कृतियों की अपेक्षा भारतीय संस्कृति अग्रणी स्थान रखती है.

डिम्पल कौर
क्षे. का., आगरा

पहनावे के विविध रंग

'अनेकता में एकता' सिर्फ कुछ शब्द नहीं हैं, बल्कि यह एक ऐसी चीज़ है जो भारत जैसे सांस्कृतिक और विरासत में समृद्ध देश पर पूरी तरह लागू होती है. कुछ आदर्श वाक्य या बयान, भारत के उस दर्जे को बयां नहीं कर सकते जो उसने विश्व के नक्शे पर अपनी रंगारंग और अनूठी संस्कृति से पाया है. मौर्य, चोल और मुगल काल और ब्रिटिश साम्राज्य के समय तक भारत हमेशा से अपनी परंपरा और आतिथ्य के लिए मशहूर रहा. रिश्तों में गर्माहट और उत्सवों में जोश के कारण यह देश विश्व में हमेशा अलग ही नजर आया. इस देश की उदारता और जिंदादिली ने बड़ी संख्या में सैलानियों को इस जीवंत संस्कृति की ओर आकृष्ट किया, जिसमें धर्मों, त्योहारों, खाने, कला, शिल्प, नृत्य, संगीत और कई चीजों का मेल है. 'देवताओं की इस धरती' में संस्कृति, रिवाज़ और परंपरा से लेकर बहुत कुछ खास रहा है.

'भारतीय जीवनशैली प्राकृतिक और असली जीवनशैली की दृष्टि देती है. हम खुद को अप्राकृतिक मुखौटे से ढककर रखते हैं. भारत के चेहरे पर मौजूद हल्के निशान रचयिता के हाथों के निशान हैं.' - जॉर्ज बर्नाड शा.

किसी भी देश के विकास में उसकी संस्कृति का बहुत योगदान होता है. देश की संस्कृति, उसके मूल्य, लक्ष्य, प्रथाएं और साझा विश्वास का प्रतिनिधित्व करते हैं. भारतीय संस्कृति कभी कठोर नहीं रही इसलिए यह आधुनिक काल में भी गर्व के साथ जिंदा है. यह दूसरी संस्कृतियों की विशेषताएं सही समय पर अपना लेती हैं और इस तरह एक समकालीन और स्वीकार्य परंपरा के तौर पर बाहर आती है. समय के साथ चलते रहना भारतीय संस्कृति की सबसे अनूठी बात है. भारत की कुछ बातें हैं जो पूरी दुनिया में मशहूर हैं.

वस्त्रों के कलात्मक पक्ष और गुणवत्ता के कारण उन्हें अमूल्य उपहार माना जाता था. खादी से लेकर स्वर्णयुक्त रेशमी वस्त्र, रंग-बिरंगे परिधान, ठंड से पूर्णत: सुरक्षित सुंदर कश्मीरी शॉल भारत के प्राचीन कलात्मक उद्योग का प्रत्यक्ष प्रमाण थे, जो ईसा से 200 वर्ष पूर्व विकसित हो चुके थे. कई प्रकार के गुजराती छापों तथा रंगीन वस्त्रों का मिस्र में फोस्तात के मकबरे में पाया जाना, भारतीय वस्त्रों के निर्यात का प्रमाण है.

परिधान का आविष्कार तो भारत में ही हुआ, लेकिन ग्रीक, रोमन, फारस, हूण, कुषाण, मंगोल, मुगल आदि के काल में भारतीय परिधानों की वेशभूषा में परिवर्तन होते रहे. हालांकि परिवर्तन के चलते कई नए वस्त्र में प्रचलन में आए और पहले की अपेक्षा भारतीयों ने इनमें खुद को ज्यादा आरामदायक महसूस भी किया लेकिन अंग्रेजों के काल में भारतीयों की वेशभूषा बिल्कुल ही बदल गई.

प्राकृतिक जीवन के सिद्धांत को देखा जाए तो पोशाक के संबंध में हमारे भारतीय मनीषियों को इसकी गहरी समझ थी. वे इसके मनोविज्ञान को जानते थे. वे प्रकृति के इस नियम को जानते थे कि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए वायु, सूर्य और प्रकाश का हमारी देह से जितना संपर्क होता रहे, उतना ही अच्छा है. प्राचीनकाल से ही हम मौसम के अनुसार वस्त्र बनवाते हैं और भारत ही दुनिया में एक देश है, जहां समस्त मौसम उपलब्ध हैं.

भारत में प्रत्येक कार्य, अवसर, मौसम, आदि के लिए अलग-अलग परिधानों का प्रावधान है. यदि आप उक्त परिधान या पोशाकों को पहनते हैं तो आपको अच्छा महसूस होगा.

सिर का पहनावा : सिर के पहनावे को कपालिका, शिरस्त्राण, शिरावस्त्र या शिरोवेष कहते हैं. यह कपालिका कई प्रकार की होती है.

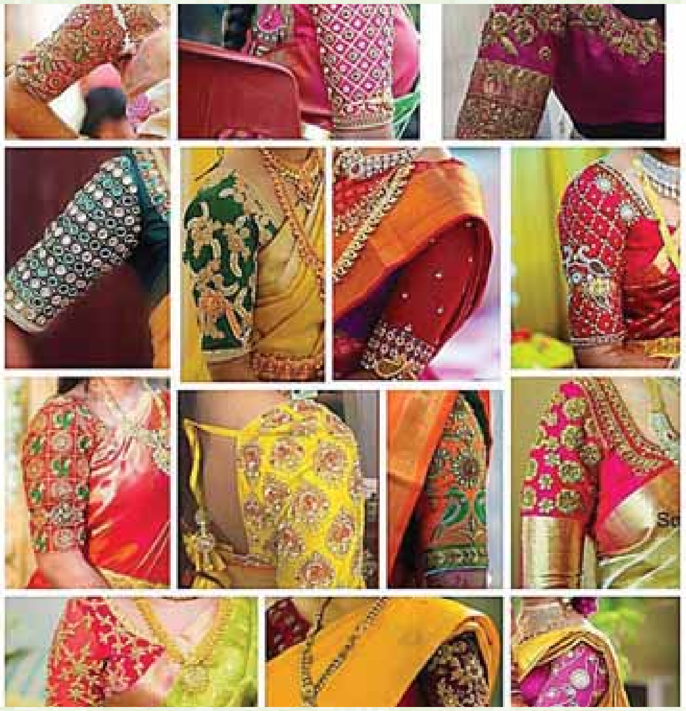

प्रत्येक प्रांत में यह अलग-अलग किस्म, नाम, रंग और रूप में होती है. राजा-महाराजाओं के तो एक से एक स्टाइल के टोप, पगड़ी या मुकुट हुआ करते थे लेकिन हम सामान्यजनों द्वारा पहने जाने वाले कपालिका के बारे में ही बात करेंगे. यहां ध्यान रखने वाली बात यह है कि टोपी और पगड़ी में फर्क होता है.

साफा: यदि हम साफे की बात करें तो मालवा में अलग प्रकार का और राजस्थान में अलग प्रकार का साफा बांधा जाता है. इसे पगड़ी या फेटा भी कहते हैं. महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, गुजरात में यह अलग होता है, तो तमिलनाडु में अलग. प्राचीनकाल और मध्यकाल में लगभग सभी भारतीय यह पहनते थे. राजस्थान में भी मारवाड़ी साफा अलग तो सामान्य राजस्थानी साफा अलग होता है. मुगलों ने अफगानी, पठानी और पंजाबी साफे को अपनाया. सिखों ने इन्हीं साफे को जड्डे में बदल दिया, जो कि उन्हें एक अलग ही पहचान देता है.

राजस्थान में राजपूत समाज में साफों के अलग-अलग रंगों व बांधने की अलग-अलग शैली का इस्तेमाल समय-समय के अनुसार होता है, जैसे युद्ध के समय राजपूत सैनिक केसरिया साफा पहनते थे अत: केसरिया रंग का साफा युद्ध और शौर्य का प्रतीक बना. आम दिनों में राजपूत बुजुर्ग खाकी रंग का गोल साफा सिर पर बांधते थे तो विभिन्न समारोहों में पचरंगा, चुंदड़ी, लहरिया आदि रंग-बिरंगे साफों का उपयोग होता था. सफेद रंग का साफा शोक का पर्याय माना जाता है इसलिए राजपूत समाज में सिर्फ शोकग्रस्त व्यक्ति ही सफेद साफा पहनता है.

मांगलिक और धार्मिक कार्यों में साफा :आज भी मांगलिक या धार्मिक कार्यों में साफा पहने जाने का प्रचलन है जिससे कि किसी भी प्रकार के रस्मोरिवाज में एक सम्मान, संस्कृति और आध्यात्मिकता की पहचान होती है. विवाह में घराती और बाराती पक्ष के सभी लोग यदि साफा पहनते हैं तो विवाह समारोह में चार चांद लग जाते हैं. इससे समारोह में उनकी एक अलग ही पहचान बनती है.

टोपी: टोपी सिर का एक ऐसा पहनावा है, जो कि अधिकतर भारतीय हमेशा पहने रहते हैं. जिस टोपी को गांधी टोपी कहा जाता है, दरअसल, यह महाराष्ट्र के गांवों में पहनी जाने वाली टोपी है. इसी तरह हिमाचली टोपी, नेपाली टोपी, तमिल टोपी, मणिपुरी टोपी, पठानी टोपी, हैदराबादी टोपी आदि अनेक प्रकार की टोपियां होती हैं.

कुर्ता एवं पायजामा: भारतीय सनातन संस्कृति का विशेष वस्त्र है कुर्ता एवं पजामा (पायजामा). यह प्रत्येक प्रांत में अलग-अलग शैली में पहना जाता है. कुर्ते को अफगानिस्तान में पैरहन, कश्मीर में फिरान और नेपाल में दौरा के नाम से जाना जाता है. राजस्थानी, भोपाली, लखनवी, मुल्तानी, पठानी, पंजाबी, बंगाली, हर कुर्ते की डिजाइन अलग होती है.

सलवार एवं कुर्ती: जिस तरह पुरुष कुर्ता और पायजामा पहनते हैं उसी तरह महिलाएं कुर्ती और पायजामे (सलवार) के साथ चुनरी, ओढ़नी या दुपट्टा भी पहनती हैं. यह महिलाओं के लिए अलग शैली में निर्मित होता है. पंजाबी शैली, उत्तर भारतीय शैली (स्टाइल) आदि में निर्मित सलवार-कुर्ती महिलाओं के लिए सबसे उत्तम वस्त्र माना गया है.

जम्मू और कश्मीर में ठंड अधिक होने के कारण वहां की महिलाएं व पुरुष 'पैरहन' पहनते हैं. यह पोशाक पहाड़ी इलाकों में काफी प्रसिद्ध है. कश्मीर की महिलाएं सिर को दुपट्टे से ढककर पीछे से बांध लेती हैं. 'सलवार' नामक चौड़े पायजामे से पैर ढका रहता था जबकि ऊपरी हिस्से में पूरे बांह की कमीज पहनी जाती थी. इसके ऊपर एक छोटा अंगरखा कोट होता था जिसे सदरी कहते थे. बाहरी लबादे को चोगा कहते थे, जो नीचे टखनों तक आता था. इसकी एक लंबी, ढीली आस्तीन होती थी और एक कमरबंद होता था. सर की पोशाक एक छोटे कपड़े से ढकी छोटी चुस्त टोपी बनी होती थी. इसी से पगड़ी बनती थी.

धोती: प्राचीनकाल से ही भारत में पुरुषों द्वारा साधारणत: धोती, अंतरिय (शरीर के निचले हिस्से में लपेटा हुआ वस्त्र), उत्तरिय (शरीर के ऊपरी हिस्से में लपेटा हुआ वस्त्र), कमरबंध (जैसा कि

नाम से जाहिर है कमर से बांधा हुआ) और पगड़ी पहनी जाती थी. अंतरिय कमर पर कायाबंध द्वारा टिकाया जाता था, जो कि अक्सर सामने से कमर के मध्य भाग में बांधा जाता था. महिलाएं धोती, साड़ी, स्तनपट्टा (स्तनों को संभाले रखने के लिए) पहनती थीं. उपरोक्त वस्त्रों की खासियत यह थी कि ये सिले हुए नहीं होते थे, लेकिन बाद में इन वस्त्रों को पहनने के तरीके में काफी बदलाव आए. सबसे पहले धोती के ऊपर के वस्त्र में बदलाव आया. उत्तरिय वस्त्र की जगह कुर्ता पहनने का प्रचलन हुआ.

पहले पायजामे की जगह धोती पहनने का प्रचलन था. पुरुषों के लिए धोती एक ऐसा परिधान था, जो उत्तर और दक्षिण भारत में एकसाथ प्रचलित था. धोती को पहनने की स्टाइल अलग-अलग थी. दक्षिण भारत में तो आज भी अधिकतर लोग धोती ही पहनते हैं.

पायजामे की अपेक्षा रेशमी धोती अधिक सात्विक मानी गई है. उसे धारण करने से देह के सर्व ओर सूक्ष्म गोलाकार कवच निर्मित होता है. इससे जीव के लिए देवता के तारक-मारक एवं सगुण - निर्गुण दोनों तत्व ग्रहण करना सुलभ हो जाता है. उत्तर भारत में धोती को अब विशेष अवसरों पर ही पहना जाता है, जैसे किसी यज्ञ, पूजा या मांगलिक कार्य में. पहले धोती का रंग सिर्फ सफेद ही होता था लेकिन अब अच्छे से कास्तकारी की गई रंगीन धोती भी प्रचलन में है. त्योहार, यज्ञ, उपनयन, विवाह, वास्तु शांति जैसी धार्मिक विधि के समय इसे पहना जाता है, हालांकि आजकल यह प्रचलन से बाहर हैं.

दक्षिण भारत में पहने जाने वाली पोशाकें सूती वस्त्र से बनाई जाती हैं, जो काफी हल्की होती हैं. पुरुष लुंगी और कमीज के साथ अंगवस्त्र (कंधे पर रखा जाने वाला कपड़ा) को लेते हैं.

चोली और ब्लाउज: वक्षबंधनी को चोली भी कहते हैं. भारतीय चोली का ही विकसित रूप है ब्रा या ब्रेसियर. अब महिलाएं चोली नहीं पहनती हैं, वे ब्रा ही पहनती हैं. चोली के पीछे है, इतिहास 2000 साल पुराना! गुजरात और महाराष्ट्र में ईसा के जन्म से भी पहले की पेंटिंग्स में चोली को देखा गया. चोली का मकसद था औरत के स्तनों को ढकना.

आधुनिक ब्लाउज का जन्म इसी से हुआ. स्तनों पर चोली और चोली के ऊपर ब्लाउज पहना जाता है. राजस्थानी महिलाएं इसे घाघरे के साथ पहनती थीं, जो आगे से ढकी होती थीं और पीछे से बांधने के लिए इनमें डोरी होती थी. चोली का डिजाइन समय और संस्कृति के साथ बदलता रहता है.

साड़ी पहनने के कई तरीके हैं, जो पारंपरिक मूल्यों और रुचियों पर निर्भर करते हैं. अलग-अलग शैली की साड़ियों में कांजीवरम साड़ी, बनारसी साड़ी, पटोला साड़ी और हकोबा मुख्य हैं. मध्यप्रदेश की चंदेरी, महेश्वरी, मधुबनी छपाई, असम की मूंगा रेशम, उड़ीसा की बोमकई, राजस्थान की बंधेज, गुजरात की गठोडा, पटौला, बिहार की टसर, काथा, छत्तीसगढ़ी कोसा रेशम, दिल्ली की रेशमी साड़ियां, झारखंडी कोसा रेशम, महाराष्ट्र की पैठणी, तमिलनाडु की कांजीवरम, बनारसी साड़ियां, उत्तरप्रदेश की तांची, जामदानी, जामवर एवं पश्चिम बंगाल की बालूचेरी एवं कांथा टंगैल आदि प्रसिद्ध साड़ियां हैं.

लहंगा: घाघरा का आधुनिक स्वरूप है स्कर्ट और लहंगा! लहंगा जो महिलाओं की होती है. यह ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों में पहना जाता है. शहरों में डिजाइन वाले लहंगे, चोली और चुनरी विवाह आदि समारोह में पहने जाते हैं,

गरारा सूट: गरारे का जन्म लखनऊ में हुआ. यह भारतीय लहंगा, चुनरी और कुर्ती का एक नया रूप है. अवध के नवाबों और तालुकदारों की पत्नियां इन्हें पहना करती थीं. गरारे का घेर कमर से शुरू होता है और घुटनों पर इनमें छोटी-छोटी प्लीट्स होती हैं जिसकी वजह से घुटनों पर इनका घेर बढ़ जाता है. पारंपारिक गरारे की 1 टांग बनाने में ही 12 मीटर कपड़ा लगता है.

बंडी: बंडी को कोटी भी कहते हैं. जैकेट, ब्लेजर, शेरवानी या कोट इसी का विकसित रूप है. बिना आस्तीन की एक प्रकार की कुरती को कोटी और बगलबंद नाम के कपड़े को बंडी कह सकते हैं. हमारे नेता यही कोटी अक्सर पहनते हैं.

हाफबांह वाली महिलाओं की कोटी उनकी कमर के ऊपर तक की ही होती है, जबकि पुरुषों की कोटी जंघा तक होती है. हालांकि बंडी का प्रचलन कब से शुरू हुआ, यह बताना मुश्किल है लेकिन जैकेट का प्रचलन 15वीं या 16वीं सदी में शुरू हुआ था. चमड़े की जैकेट अंग्रेज सैनिक पहनते थे.

लुंगी: इसे सरौंग भी कहते हैं. इसे कमर पर लपेटकर कसा जाता है. इसे कमर में लपेटने वाला बड़ा अंगोछा या तहमद भी कहते हैं. दक्षिण भारत में लुंगी प्रचलित है. खासकर आंध्र और तेलंगाना में इसका प्रचलन है. यह धोती का ही एक छोटा रूप है. धोती में कपड़ा ज्यादा होता है जबकि लुंगी में कम.

लुंगी आमतौर पर 2 प्रकार की होती हैं- खुली लुंगी और सिली लुंगी! लुंगी पहनने का प्रचलन बांग्लादेश, बर्मा, इंडोनेशिया, श्रीलंका, थाईलैंड और मलेशिया में भी है. यह बहुत ज्यादा गर्मी और नमी वाली क्षेत्रों में विशेष रूप से लोकप्रिय पारंपरिक पोशाक है.

अचकन या शेरवानी: शेरवानी एक भारतीय परिधान है. पहले इसे अचकन कहते थे तथा बाद में इसे शेरवानी कहने लगे. शेरवानी कोटनुमा एवं घुटने से लंबी होती है. शेरवानी भारत में आमतौर पर राजस्थान, उत्तर प्रदेश और हैदराबाद में पहनी जाती है. इसे अक्सर विवाह समारोह आदि में पहना जाता है. अचकन कई प्रकार और डिजाइन की होती है. मुगलों के समय इसे बंद या गोल गले की बनाकर इसे शेरवानी कहा जाने लगा.

ओढ़नी: इसे चुनरी, लहरिया और दुपट्टा भी कहते हैं. ओढ़नी थोड़ी बड़ी होती लेकिन चुनरी या दुपट्टा छोटा होता है. इसी का सबसे छोटा रूप स्कार्फ है. ओढ़नी स्त्रियां घाघरे और कुर्ती के ऊपर ओढ़ती हैं. ओढ़नी की लंबाई प्राय: ढाई से तीन मीटर और चौड़ाई डेढ़ से पौने दो मीटर होती है जिससे कि घूंघट निकालने पर भी ओढ़नी नीचे घाघरे तक रहती है. ओढ़नियां विविध रंगों में रंगी जाती हैं और इन पर कीमती बेलें या गोटा पत्ती लगाई जाती हैं.

भारत में प्राचीनकाल से ही ओढ़नी का प्रचलन था जिसे बंधेज भी कहते हैं. 7 वीं शताब्दी में हर्ष का दरबारी कवि बाण 'भट्ट' वस्त्रों का वर्णन करता है तो 16वीं शताब्दी में मलिक मुहम्मद जायसी 'समुन्द्र लहर' और 'लहर पटोर' का.

भारतीय महिला की सुंदरता उसके कपड़ों में होती है. दुनियाभर में पारंपरिक और एथिनिक फिर भी समकालीन भारतीय साड़ियां मशहूर हैं. यह शरीर के उपरी हिस्से को ढकने वाले ब्लाउज के साथ पहनी जाती है. ग्रामीण इलाकों में 'घाघरा चोली' का पहनावा बहुत मशहूर है. एक संपूर्ण और शालीन परिधान के लिए महिलाएं दुपट्टा पहनती हैं, जो एक

उचित लंबाई का नर्म और नाजुक कपड़ा होता है, जिसे कंधे पर डाला जाता है.

हालांकि मामूली बदलाव के साथ सलवार कमीज़ भारत के हर हिस्से की प्रसिद्ध पोशाक है. इस परिधान में दो पीस होते हैं - कमीज़ जो कि एक लंबा टॉप होता है जो शरीर के उपरी भाग को ढकता है और सलवार एक तरह की पतलून है. घाघरा चोली की तरह सलवार कमीज़ के साथ भी दुपट्टा ओढ़ा जाता है.

पुरुषों के लिए भी परिधानों के प्रकार में कोई कमी नहीं है. धोती कुरता से लेकर शर्ट पैंट तक भारतीय पुरुष वह सब कुछ पसंद करते हैं जो अच्छी तरह से फिट हो और अच्छा दिखे. लेकिन पारंपरिक तौर पर आप देख सकते हैं कि उत्तर भारतीय पुरुष औपचारिक समारोह में कुरता पायजामा, धोती कुरता या शेरवानी पहनते हैं और दक्षिण भारतीय पुरुष शर्ट के साथ लुंगी पहनना पसंद करते हैं.

मेले और त्योहार पर पहनावा

जनवरी से दिसंबर तक हर महीने में विशेष त्योहार या मेले आते है. मकर संक्रांति, बसंत पंचमी, होली, राम नवमी, जन्माष्टमी, दीपावली, ईद, महावीर जयंती, बुद्ध पूर्णिमा, गुरु पर्व और क्रिसमस! हर धर्म के त्योहार का अपना महत्व है और इन्हें बड़े धूमधाम से मनाया जाता है. मेले और त्योहार में रंग बिरंगे कपड़े यहाँ पहने जाते हैं. वैसे भी भारत में हर 20 मील में भाषा एवं कपड़े बदल जाते हैं. हर प्रांत में यहाँ अलग पहनावा है जिसके कारण हम अनुमान लगा सकते हैं कि यह किस प्रदेश का व्यक्ति है?

इतनी विविधता के बावजूद भारत में लोग एकजुट हैं और अपनी संस्कृति और परंपरा पर गर्व महसूस करते हैं. चाहे अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह हो या सौंदर्य प्रतियोगिताएं, विश्व मंच पर भारत ने प्रतिभा और संस्कृति का प्रदर्शन किया है. कई शासक यहां आए लेकिन भारतीयों ने अपने सांस्कृतिक मूल्यों को सहेज कर रखा है. समय के साथ चलने और लचीलेपन के कारण भारतीय संस्कृति आधुनिक भी है और स्वीकार्य भी है.

वी. एम. सैनी
स्टा.प्र.कें., गुरुग्राम

भारतीय संस्कृति के मायने : पुरुष बनाम स्त्री

संस्कृति का अर्थ है शुरू से चली आ रहीं विचारधाराएँ, परंपरा, सामाजिक सोच का मानवीय जीवनधारा में सम्मेलन भारतीय संस्कृति एक वृहद संस्कृति है जहाँ विविध प्रकार की सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप एवं भारतीय वातावरण के अनुसार जन मानस रीतियों एवं रिवाजों का पालन करता है सामाजिक एवं प्राकृतिक व्यवस्था के दो अंग हैं पुरुष एवं स्त्री संस्कृति के मायने कहीं न कहीं दोनों के लिए अलग होते हैं जिनके दो धड़ समाज में हैं, प्रथम स्त्रीवादी एवं द्वितीय पुरुषवादी. भारतीय परिवेश में स्त्री एवं पुरुष को एक मानव समझ के समान व्यवहार नहीं किया जाता है सांस्कृतिक मायनों में पुरुष एवं स्त्री के संदर्भ में सामाजिक व्यवस्थाएं अलग-अलग हैं.

ज़्यादातर, आज भी भारत में स्त्री का शाम के बाद देर तक बाहर रहना रोका जाता है, वहीं पुरुष के लिए समय का ऐसा कोई बंधन नहीं दिखता है कई बार ऐसा देखा गया हैं कि इसका खामियाजा स्त्री को बेवजह ही भुगतना पड़ता है एवं उनके लिए अपने आवश्यक कार्यों को पूरा कर पाना कष्टप्रद हो जाता है मोहल्ले एवं पड़ोस के लोग अभी भी ये कहते हुए सुने जाते हैं कि" फ़लां की लड़की रात में इतना देर से वापस आती है, कोई संस्कार ही नहीं है उसमें" कपड़ों को लेकर संस्कार की बातें तो पूरे भारत भर में चलती हैं महिलाओं के कपड़े पहनने को लेकर अक्सर किसी न किसी प्रकार का विवाद सामने आता ही रहता है कभी कोई पुरुष ऐसी टिप्पणी कर देता है जिससे विवाद उठ जाता है, कभी कोई स्त्रीवादी अपनी बातें ले कर सही अथवा गलत मीडिया में आ जाती है. इन सभी बातों के मध्य जो सबसे मुख्य मुद्दा है वह रह ही जाता है बातें केवल स्त्री के पक्ष में ही नहीं है, किसी की सहायता करना सभी धर्मों में लिखा है एवं हमें बचपन से संस्कार भी दिये गए हैं कि "सेवा परमो धर्म:" परंतु जब बात आती है राह में हुए छोटे-मोटे दुर्घटनाओं की तो आपने शायद खुद देखा होगा कि पुरुष की मदद के लिए कितने लोग दौड़ते हैं एवं महिला की मदद के लिए कितने लोग. मदद की आवश्यकता एवं सहायता दोनों को ही होती है, परंतु ऐसा देखा गया है कि स्त्री की मदद करने वाले एवं काफी समय तक उनके उपचार के लिए साथ रहने वाले घायल पुरुष के साथ रहने वालों की अपेक्षा ज्यादा होते हैं. प्राथमिकता अवश्य दी जानी चाहिए परंतु प्राथमिकता किसी अन्य के अधिकारों एवं आवश्यकताओं के ऊपर नहीं होनी चाहिए. यह सर्वविदित है कि दोनों की शारीरिक क्षमताओं में विभिन्नता है, परंतु इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि आप 5 लोगों की पंक्ति में भी किसी विशेष को आगे लगवा दो ताकि वह तुरंत बिल/ टिकिट लेकर/देकर चला जाए. संस्कृति का हवाला देकर कुछ लोग ऐसा कह सकते हैं कि अरे इन व्यक्ति विशेष को अत्यधिक काम होगा इनको जल्दी से काम करके जाने दो. कई सारी परिस्थितियों में यह बात सही होगी कि प्राथमिकता आपने दे दी परंतु क्या उसी समय मे कतारबद्ध किसी

व्यक्ति के घर पर कोई आकस्मिकता नहीं हो सकती जो आपने अन्य व्यक्ति को "मैंनर्स" के नाम पर पंक्ति के प्रथम स्थान पर भेजवा दिया.

बच्चों को प्राथमिक स्तर से ही सभी धर्म, जाति, सामाजिक स्तर को उपेक्षित करके सबको समान स्तर का व्यवहार करने की शिक्षा देना चाहिए. विकसित देशों में जाति, धर्म, लिंग आधारित संस्कृति उतनी नहीं है जितनी भारत में है हर देश की अपनी संस्कृति होती है, जहाँ विभिन्न मापदंडों में लोगों को अपना जीवन यापन करना होता है. भारत में संस्कृति के मायनों के दोहरे मापदंड हैं, कभी महिलाओं के साथ संस्कृति के नाम पर गलत होता है कभी पुरुषों के साथ गलत होता है. काफी विषयों पर उदाहरण दिये जा सकते हैं, परंतु कमियाँ निकालने की बजाय हमें इस पर ज्यादा ज़ोर देना चाहिए कि कैसे हम सारी विसंगतियों को दूर कर सकते हैं.

किसी भी प्रकार की सांस्कृतिक विषमता को दूर करने का बीड़ा जरूरी नहीं कि उसी वर्ग विशेष का हो भारत की पुरातन संस्कृति में सती प्रथा का उन्मूलन एक पुरुष के अथक प्रयासों द्वारा किया गया था कल्चर अथवा मैनर के नाम पर आज भी जन परिवहन के माध्यमों जैसे मेट्रो इत्यादि मे बीमार पुरुष खड़ा रह जाता है लेकिन एक सक्षम युवती आराम से मोबाइल वीडियो देखते हुए यात्रा पूरी कर लेती है.

इस विषमता के विषय में इन मुद्दों पर तुरंत ही काम करना शुरू कर देना चाहिए कुछ प्रभावी कदम इस प्रकार हो सकते हैं:-

पहला शिक्षा व्यवस्था में प्राथमिक शिक्षा स्तर के बाद "केस स्टडीज" लाया जाना एवं उन पर बच्चों के द्वारा जो जवाब लिखे जायें उनका मूल्यांकन अच्छे से करके उनके अभिभावकों को बताया जाना चाहिए कि क्या उनका बच्चा सही सांस्कृतिक सोच की तरफ जा रहा है ?

इसके अतिरिक्त भारतीय चैनल जिस तरह की सामग्री परोस रहे हैं उनकी निगरानी करने का प्रभावी माध्यम या समिति बने जो यह देखे कि परोसी जा रही सामग्री पुरुष या स्त्री के पक्ष अथवा विपक्ष में भावनाएं तो नहीं भड़का रहीं?

विभिन्न कानूनों में सुधार करने की आवश्यकता है, तीन तलाक देकर महिला को अकेले छोड़ देना भारतीय संस्कृति नहीं है, इसके विषय में भारत सरकार द्वारा कानून भी लाया गया है, जो सराहनीय है इसी प्रकार मौजूदा कुछ कानून कुछ मामलों में छद्म स्त्रीवादियों द्वारा दुरुपयोग भी किए जा रहे हैं इन कानून के प्रावधानों का प्रवर्तन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि यदि शिकायत झूठी निकली तो दोषी के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए.

विभिन्न कार्यालयों की कार्य संस्कृति में भी बदलाव लाने की आवश्यकता है, ऐसा देखा जाता है कि ज़्यादातर महिलाएं कम समय में ज्यादा कार्य कर लेती हैं कई सारे सर्वेक्षणों में भी बताया गया कि कार्य के प्रति उनका फोकस ज्यादा होता है ऐसी परिस्थिति में इसका पुरस्कार भी उन्हें मिलना चाहिए. कार्मिक की वार्षिक समीक्षा में उनकी कार्य अवधि से ज्यादा उनकी कार्य गुणवत्ता पर ध्यान दिया जाना चाहिए.

महिलाओं को शिक्षा देने के मामले में हमारे समाज का नज़रिया काफी गलत है कई परिवार उनको पढ़ने जाने से हतोत्साहित करते हैं, उनका सोचना होता है कि पढ़ा लिखाकर क्या होगा सारे संस्कार हम घर पर ही दे सकते हैं.

घर परिवार में भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बेटे एवं बेटियों में समानता का भाव लाएँ उनको एक समान प्यार, संसाधन एवं सुविधायें दी जानी चाहिए विद्यालयों में "केस स्टडीज" के उत्तर अभिभावकों को दिखाना चाहिए और समझाना भी चाहिए कि उनके बच्चे की सोच सही दिशा में जा रही हैं अथवा नहीं.

सांस्कृतिक समानता लाने का कार्य वृहद है, समानता लाना एक दो दिन का कार्य नहीं बल्कि दशकों का काम है हम जितना जल्दी प्रारम्भ करेंगे उतना ही जल्दी एवं प्रभावी बदलाव ला पाएंगे. आइये हम सब मिलकर यह प्रण लेते हैं कि अपनी संस्कृति में यह अच्छा बदलाव हम लाकर रहेंगे जहां सभी लोग एक दूसरे को समान दर्जा देते हों.

संसार के लगभग सभी धर्मों में लगभग दस समानताएँ हैं जिनमें धर्म सहिष्णुता, सत्य बोलना, चोरी न करना, स्त्रियों का सम्मान करना, प्राकृतिक संसाधनों का सही उपयोग, अच्छी शिक्षा, निर्धन की सहायता, सादा जीवन, जीवों पर दया करना इत्यादि हैं, तो इतनी सारी समानता किसने पैदा की हैं ?

सांस्कृतिक समानता एक बड़े स्तर का विषय है, इस प्रकार की समानता लाने के लिए हमारे प्रयास भी वृहद स्तर के होने चाहिए. पुरुषों को समझना होगा कि केवल उनके प्रयासों से ही दुनिया नहीं चल रही है इसके साथ महिलाओं को भी यह समझना होगा कि उनको दी गयी सुविधाओं का दुरुपयोग नहीं हो एवं उनको भी आगे उदाहरण प्रस्तुत करना होगा जिससे ये दिखे कि मानवता ही पहला धर्म है.

प्रशांत विश्वकर्मा,
क्षे. का., गोरखपुर

क्या है सदाबहार?

सदाबहार शाकीय वनस्पति है जिसे भारत में आमतौर से बाग-बगीचों में सजावटी पौधे के रूप में गमलों अथवा भूमि पर उगाया जाता है. यह पौधा अफ्रीका महाद्वीप के मेडागास्कर देश का मूल निवासी है. कसैले स्वाद के कारण तृणभोजी जानवर (herbivores) इस पौधे का तिरस्कार करते हैं. सदाबहार पौधों के आस-पास कीट, पतिंगे, बिच्छू तथा सर्प आदि नहीं फटकते, जिससे आस-पड़ोस में सफाई बनी रहती है. सदाबहार पुष्प को सदाफूली, नयनतारा नामों से भी जाना जाता है. सदाबहार की कुल आठ जातियाँ हैं. यह फूल न केवल सुन्दर और आकर्षक है, बल्कि औषधीय गुणों से भी भरपूर माना गया है. पाँच पंखुड़ियों वाला यह सदाबहार फूल गुलाबी, फालसाई, जामुनी, श्वेत आदि रंगों में खिलता है

सदाबहार का उपयोग खांसी, गले की खराश और फेफड़ों के संक्रमण में उपयोग किया जाता है. आज यह विषाक्त पौधा संजीवनी बूटी का काम कर रहा है तथा फूलों वाली क्यारियों के लिए सबसे लोकप्रिय पौधा बन चुका है. यह फूल सुंदर तो है ही आसानी से हर मौसम में उगता है. तो आइए, जानते हैं कि इसके गुणों का उपयोग औषधि के रूप में कैसे किया जाता है.

1. पत्तियों और फूलों को कुचलकर बवासीर होने पर इसे लगाने से तेजी से आराम मिलता है.
2. इसकी पत्तियों के रस को ततैया या मधुमक्खी के डंक मारने पर लगाने से बहुत जल्दी आराम मिलता है. इसी रस को घाव पर लगाने से घाव भी जल्दी सूखने लगते हैं. त्वचा पर खुजली, लाल निशान या किसी तरह की एलर्जी होने पर पत्तियों के रस को लगाने पर आराम मिलता है.
3. सदाबहार के फूलों और पत्तियों के रस को मुहांसों पर लगाने से कुछ ही दिनों में इनसे निजात मिल जाती है.
4. दो फूलों को एक कप उबले पानी या बिना शक्कर की उबली चाय में डालकर ढककर रख दें और फिर इसे ठंडा होने पर रोगी को पिलाएं. इसका लगातार सेवन मधुमेह में फायदा पहुंचाता है. सदाबहार और नीम के 7-7 पत्तों का खाली पेट सेवन करना मधुमेह में काफी उपयोगी होता है. मधुमेह रोगियों को श्वेत रंग का फूल सुबह खाली पेट खाना चाहिए.
5. आधुनिक शोधों के अनुसार, इस पौधे की पत्तियों में पाए जाने वाले प्रमुख अल्कलायड रसायनों जैसे विनब्लास्टिन और विनक्रिस्टिन को ल्यूकेमिया के उपचार के लिए उपयोगी माना गया है.
6. इसकी पत्तियों को तोड़े जाने पर जो दूध निकलता है, उसे घाव पर लगाने से किसी तरह का संक्रमण नहीं होता और घाव जल्दी सूख भी जाता है.
7. पत्तियों को तोड़ने पर निकलने वाले दूध को खाज-खुजली में लगाने पर जल्द आराम मिलने लगता है.

इसके जड़ों की छाल औषधीय दृष्टिकोण से सबसे महत्वपूर्ण भाग होती है. इस पौधे में एजमेलीसीन (Ajmalicine), सरपेन्टीन (Serpentine), रेर्स्पीन (Reserpene), विण्डोलीन (Vindoline), विनक्रिस्टीन (Vincristine) तथा विनब्लास्टिन (Vinblastin) जैसे विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण क्षार (alkaloids) पाये जाते हैं. सबसे चमत्कृत करने वाली बात है कि यह बारूद जैसे पदार्थ को भी निष्क्रिय करने की क्षमता रखता है.

ध्यान रहे,कड़वा स्वाद होने के कारण इसे खाली पेट लेने से उल्टी हो सकती है. अतः इसका प्रयोग कुछ खाकर ही करें. छोटे बच्चों को इसके रस में शक्कर या चूर्ण में गुड़ मिलाकर गोलियों के रूप में दिया जा सकता है.

सुप्रिया नाडकर्णी
यूनियन धारा, कें.का.

आपकी नज़र में...

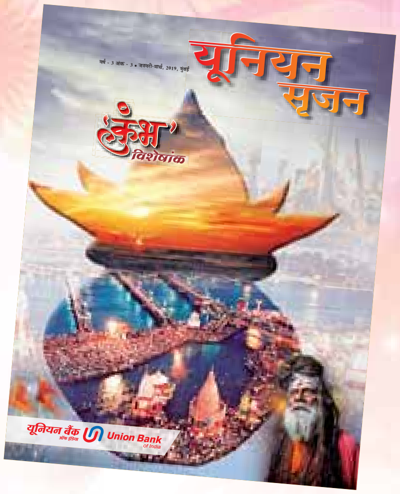

पत्रिका "यूनियन सृजन" का कुम्भ विशेषांक मिला, धन्यवाद! पत्रिका अपने विशेषांक के अनुरूप कुम्भ से संबन्धित ऐतिहासिक, वैश्विक, आध्यात्मिक एवं समकालीन ज्ञान से परिपूर्ण है. वैसे तो पत्रिका का प्रत्येक लेख अतिविशिष्ट है किन्तु कल्पवास, कुम्भ, अर्धकुम्भ और महाकुंभ, कुल धार्मिकता और मानवता तथा नागा साधु अत्यंत ज्ञानवर्धक एवं सुरुचिपूर्ण हैं. इनके लेखकों को बहुत बहुत बधाई. कुल मिलाकर "यूनियन सृजन" अपने विशिष्ट कलेवर को लिए एक उच्च स्तरीय पत्रिका है. पत्रिका में चित्रांकन भी बड़ा ही आकर्षक एवं सजीव बन पड़ा है.

पत्रिका के प्रकाशन में संपादक मंडल की मेहनत साफ दृष्टिगोचर होती है. पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े सभी लोगों को साधुवाद! पत्रिका के उज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ.

संजीव श्रीवास्तव
उप महाप्रबंधक सह मुख्य राजभाषा अधिकारी
पंजाब एंड सिंध बैंक, नयी दिल्ली

मुझे एक बार फिर मीरा रोड शाखा, ठाणे से यूनियन सृजन का जनवरी-मार्च 2019 अंक पढ़ने का मौका मिला. इस पत्रिका पर अपनी प्रतिक्रिया दिए बिना मैं अपने आप को रोक नहीं पाया. मुझे यह पत्रिका वास्तव में बहुत रुचिकर, पठनीय, लाभदायक लगी. यह 'कुंभ' अंक वास्तव में अद्भुत है. इस पत्रिका के माध्यम से सनातन संस्कृति, नागा साधुओं, महिला नागा साधुओं, किन्नर अखाड़ा तथा कुंभ के विभिन्न पहलुओं को जानने का मौका मिला. एक ग्राहक होने के नाते मुझे यूनियन बैंक की गृह पत्रिका पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है, इससे बड़ी उपलब्धि और मेरे लिए क्या हो सकती है. इसके लिए मैं यूनियन बैंक का आभार व्यक्त करता हूँ और आशा करता हूँ कि अगला अंक भी मुझे बहुत जल्द पढ़ने को मिले.

प्रवीण म्हात्रे
ग्राहक, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
मीरा रोड, ठाणे

यूनियन सृजन का जनवरी-मार्च 2019 अंक 'कुम्भ' विशेषांक अपने आप में अद्भुत एवं अद्वितीय है. जिस प्रकार यूनियन बैंक के पूर्व स्टाफ होने के नाते, यूनियन बैंक जितना मेरे दिल के करीब है उतना ही यूनियन बैंक की पत्रिका मेरे दिल के करीब है. मुझे यूनियन बैंक की पत्रिका का बेसब्री से इंतजार रहता है कि कब इसका अंक मेरे पास पहुंचे और मैं इसे पढ़ूँ. इस पत्रिका को पढ़ते हुए यह आभास हुआ कि प्रयागराज का कुम्भ अपने आप में कितनी ही विशेषताओं को समाहित किए है. इतने कम पृष्ठों में कुम्भ के अनेकों रंग और झाकियाँ प्रस्तुत करने के लिए इस विशेषांक और इसके निर्माताओं को साधुवाद. इसे पढ़कर कुम्भ को जानने-समझने की एक नयी दृष्टि मिली. पुन: आभार एवं आगामी अंकों हेतु शुभकामनाएं.

देवेंद्र पाण्डेय
सहायक प्रबंधक(राजभाषा विभाग)
भारतीय रिजर्व बैंक

हमें आपके बैंक की 'यूनियन सृजन' गृह पत्रिका के जनवरी - मार्च 2019 अंक को पढ़कर अत्यंत खुशी हुई. सुंदर कलेवर वाली इस पत्रिका में विविध विषयक सामग्री का सुनियोजित ढंग से समायोजन किया गया है, जो कि सराहनीय है.

उक्त पत्रिका की रचनाएँ काफी रुचिकर, पठनीय एवं ज्ञानवर्धक है. पत्रिका के उत्कृष्ट सम्पादन हेतु सुधी संपादक मंडल को साधुवाद एवं बधाई!

मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
युनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया, कोलकाता

RNI No. MAH HIN/2016/68433

नि:शुल्क वितरण हेतु

स्थानः भेडा घाट, जबलपुर
छायाचित्रः सुमित शर्मा, क्षे. का. रायपुर